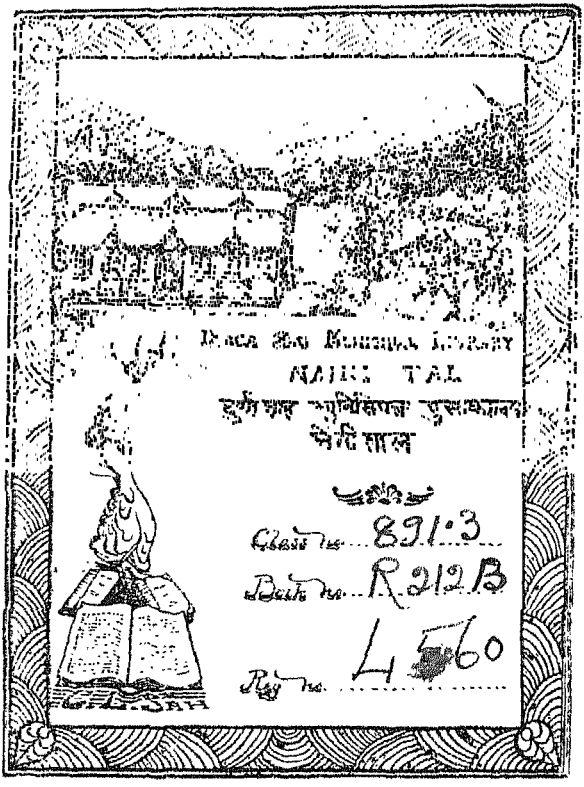

Durga Sah Municipal Library
NAINI TAL
दुर्गासाह म्युनिसिपल पुस्तकालय
नैनीताल

Class No. 891.3
Book No. R212B
Reg. No. 4560

बैलून का धड़ाका

लेखक—
रामचरन शर्मा

प्रकाशक—
साहित्य निकेतन
बरेली

प्रथम संस्करण : सितम्बर १९५८
आवरण : कौशल
प्रकाशक : साहित्य-निकेतन बरेली
मुद्रक : भारत प्रेस, काशीपुर (नैनीताल)
मूल्य : दो रुपये पचास नये पैसे

परम-तपस्वी क्रान्तिवीर,

मानवता के सच्चे पुजारी

स्वास्थ तथा विद्युत मन्त्री, उत्तर-प्रदेश

माननीय

ठाकुर हुकुमसिंह जी बिसेन

को

सादर समर्पित

दिनांक
सितम्बर १९५८

रामबरन शर्मा

देखिये—

शीशे में सबको अपनी सूरत अच्छी लगती है, इसका सही अन्दाज तो दूसरों को ही होता है। एक लेखक को अपनी कृति सन्तान से भी अधिक प्रिय होती है। काश, उसे कोई अच्छा कह देता ? मेरी अपनी पहली कृति "१६५० की क्रांति और डा० के० आई सिंह" का जो आदर पाठकों ने किया उसका विशेष रूप से आभारी हूँ। कारण, उसका प्रकाशन पटना से हुआ था, मेरी भाषा हिन्दी उर्दू मिश्रित है, पटना में इस प्रकार के प्रकाशकों की मुझे कमी सी लगी, जो लेखकों की इच्छानुसार काम कर उन्हें पूर्ण सन्तोष दे सकें।

अत: मैंने यह अपनी दूसरी कृति बरेली के साहित्य निकेतन से प्रकाशित कराने की व्यवस्था की है। ताकि अब हमारे पाठकों को यह शिकायत न हो। पुस्तक परिचय मैं क्या कराऊँ, जब वह अपने परिचय के लिये स्वयं प्रस्तुत है। यदि पढ़ने के पूर्व परिचय चाहते हैं, जैसा कि रिवाज सा हो गया है, तो बस इतना ही कहूँगा कि नैपाल के बारे में आपकी जानकारी तथा मनोरंजन के लिये सच्ची घटनाओं पर कल्पना के कुछ झीने पर्दे डालकर कहानी के रूप में प्रस्तुत किया है। जिसको मैंने नैपाल की जेल में लिखा था।

यदि पाठकों ने इसे स्वीकार किया तो मैं समझूँगा, उन्होंने इस पुस्तक की नहीं बल्कि नैपाल के एक हिन्दी साहित्यकार को अपनाकर उसे नैपाल में हिन्दी की सेवा के लिये प्रोत्साहित किया।

नैपाली तथा भारतीय पाठकों के सामने इसे रखकर आशा करता हूँ कि वे इसे प्रथम कृति की ही तरह अपनायेंगे।

—रामबरन शर्मा

—हमारा दायित्व

"बैलून का धड़ाका" हमारी अपनी चौथी रचना है। दस साल निरंतर राजनीति एवं साहित्य सेवा के पश्चात् सादर हिन्दी जगत के सम्मुख प्रस्तुत कर रहा हूँ। प्रस्तुत पुस्तक के अन्तर्गत कहानियाँ सच्ची घटनाओं पर आधारित हैं, सरस एवं मनोरंजक बनाने के लिए कल्पना का एक झीना आवरण मात्र डाला गया है। कुछ अंश तो ज्यों के त्यों रख दिए गए हैं। हमारी बहुत दिनों से यह इच्छा थी कि मैं एक पुस्तक ऐसी लिखूँ जिसको अन्तर्राष्ट्रीय सम्मान मिले, तथा जिसके पढ़ने से मनोरंजन के साथ साथ नैपाल की आर्थिक, सामाजिक, तथा राजनैतिक विषमताओं के अतिरिक्त शासन, न्याय विधान तथा उनके आधीशों की मनमानी नीति,जिसकी एक परम्परा सी बन गई है, दिग्दर्शन करा सकूँ। कहानी की आड़ में ये हमारे संस्मरण हैं। सच्ची घटनाओं पर आधारित होने के कारण हृदय पर गहरा प्रभाव अंकित करेंगे।

यद्यपि राष्ट्रपिता स्वर्गीय श्री ५ महाराजाधिराज के प्रजा वात्सल्य तथा तज्जन्य त्याग के फलस्वरूप नेपाल में भी प्रजातंत्र का उदय हो ही गया है। फिर भी अबतक सरकारी मशीन का केवल गवर्नर ही बदला जा सका है, बाकी मशीन के सारे पुर्जे अपनी जगह ज्यों के त्यों हैं; ऐसी हालत में यदि अब भी वही पुरानी परम्परा कायम है तो उसमें आश्चर्य की कौन सी बात है। साहित्य सेवी और राजनैतिक दोनों ही मैं हूँ, दिनरात रिश्वतखोरी, पक्षपात, कुनबापरवरी के कारण जनता को विविध यातनाएँ भोगनी पड़ती हैं, देखता हूँ, सुनता हूँ, किन्तु मुझे तो कोई आश्चर्य नहीं होता। क्यों ? मैं जानता हूँ उसका मूल कारण क्या है ? आमूल-सुधार का अभाव। जब तक यह नहीं हो पाता, जो कुछ हो रहा है अस्वाभाविक नहीं।

हाँ, इस तथ्य को स्वीकार करने में हमें जरा सा भी संकोच नहीं कि इस परम्परा को समाप्त करना ही होगा। एक लेखक के नाते सर्वसाधारण की अपेक्षा मैं अपने दायित्व को अधिक मानता हूँ। लेखक, यदि अपने देशवासियों के सामने कोई आदर्श नहीं रख सकता, उनमें उच्च-स्तर पर जीवन बिताने की प्रेरणा नहीं भर सकता, तो समझो उसकी रचना समाज-कल्याण एवं राष्ट्र-निर्माण के लिए नहीं, बल्कि, "तोता-मैना" के किस्से से भी बदतर है। क्योंकि उसने अधिक नहीं तो लोगों में पढ़ने की रुचि तो पैदा की ही।

पाठक का उद्देश्य होता है, पुस्तक के द्वारा नई जानकारी लेना। चाहे वह राजनैतिक, सामाजिक, ऐतिहासिक तथा कल्पना-प्रधान जैसी भी हो, हाँ, खुश्क न हो, सरस और मनोरंजक हो।

प्रस्तुत पुस्तक की चीजें संस्मरण होते हुए भी अधिकांश कल्पना प्रधान भी है, और पात्र तो प्रचुर मात्रा में काल्पनिक ही हैं। हो सकता है कि मैं अपने उद्देश्य के प्रतिपादन में पूर्ण-रूपेण सफल न हो सका होऊँ, पात्रों के चरित्र-चित्रण ठीक ढंग से न हो सके हों, या फिर कथानक ही में कमी रह गई हो, तो भी मुझे संतोष है कि अधिक नहीं तो एक जानकारी नेपाल के संबन्ध में हमारे पाठकों को होगी ही। प्रस्तुत पुस्तक मैंने बहुत विस्तृत अनुभव और अध्यन के पश्चात् लिखी है। पाठकगण, साहित्य-महारथी या आलोचक जिस किसी के पास हमारी पुस्तक पहुँचेगी तो हमारी राष्ट्रीयता का भी ज्ञान उन्हें हुए बिना नहीं रह सकता, फिर हमारी त्रुटियों की, याचना के पूर्व ही क्षमा मिल जायगी।

पहली किताब हमारी "अग्नि शिखा" राणाशासन काल में तत्कालीन शासन के विरुद्ध लिखी गई, दूसरी "१९५० की क्रांति और डाक्टर के० आई० सिंह" तीसरी "आँसू की तीन बूंदें" चौथी यह "बैलून का धड़ाका" जो आप पाठकों के सामने है। आजकल किताबों के नाम ऐसे ही रखे जाते हैं जिनमें आकर्षण हो। मित्रों की राय से मैंने भी नए नामकरण की सोची, "गुब्बारे

का आदमी" बिगुल, प्रजातंत्र का डंडा इत्यादि कई नाम रखे गए अंत में फिर उसी स्थान पर, बहुमत "बैलून का धड़ाका" के ही पक्ष में गया। नाम की सार्थकता का ज्ञान पाठकों को पहले के दस पृष्ठ ही करा देते हैं। पुस्तक का नाम क्यों और कैसे पड़ा ? इस उत्सुकता के लिये प्रायः लेखक अन्त तक पाठकों को दौड़ाता है, किन्तु मैंने उसका विलोम किया, यह सोचकर कि परिचय में सबसे पहले "नाम" ही तो आता है ? फिर किताब रोचक होगी तो पाठक अन्त तक जायगा ही, अन्त तक ले जाने के लिए उसे धोखा क्यों दिया जाय ?

हमारे गुरु देव हिन्दी पत्रकारिता के जन्मदाता स्वर्गीय बाबू विष्णुराव पड़ारकर जी का कहना था, कि कुछ दिन के बाद घुमाफिरा कर किसी प्रसंग को रखने की शैली का लोप हो जायगा, भाषा में सादगी और प्रवाह को ही दुनिया पसन्द करेगी। सुन्दर चरित्र-चित्रण एवं सुसंगठित कथानक होना चाहिए जिसमें इस बात का पूरा पूरा ध्यान रखा जाय कि अस्वाभाविकता तो नहीं है। बस ! यथाशक्ति गुरु-मंत्र के अनुसार ही मैं अपनी लेखनी को चलने के लिए बाध्य रखता हूँ। पाठकों की असुविधा का मुझे पूरा ध्यान रहता है। स्वाभाविकता कायम रखने के लिए नेपाली भाषा का भी स्थान-स्थान पर प्रयोग किया गया है फिर भी साथ ही उसका इस प्रकार हिन्दी अनुवाद रख दिया गया है जिससे पाठकों को असुविधा के बजाय कहानी का ठीक-ठीक रसास्वादन होता रहे। नेपाल के कैदियों का जीवन कैसा है, यह अनुभव मुझको है, इस किताब को मैंने जेल के अन्दर ही लिखा था। सच पूछा जाय तो कैदियों के उस नारकीय जीवन ने ही मुझे इस किताब को लिखने की प्रेरणा दी। जबकि आज विश्व अधिक से अधिक आजादी देकर कैदियों की अपराधी प्रवृत्ति को समूल नष्ट करने पर प्रयोग कर रहा है, नेपाल में यह दशा।

जैल से छूटने के बाद धर्मपत्नि नारायणी देवी शर्मा की बीमारी के कारण मैं कम स्थिर-चित्त रह पाता था। सभी डाक्टरों ने एक मुँह होकर कहा—टी० बी० का केस है, बाएँ तरफ दो कैबिटी, दाहिना फेफड़ा भी रोगग्रस्त हो चुका है तुरन्त पहाड़ ले जाने की व्यवस्था न हुई तो फिर........वही बात जिसकी कल्पना मात्र से दिल दहल उठता था। कभी कभी पत्नी की एक बात याद आती जो वे बीमारी के दिनों में हँसते हुए कहती थीं; "न बारे कै माय मंरे न बुढ़वा कै जोय।" एक सौ बीस के दर से बुड्ढा नहीं तो इस सत्ताइस साल जोकि भारतीयों और नेपालियों की औसत् जिन्दगी है उससे तो पूरी जिन्दगी पार करके अब सात साल मुनाफे में भी जी लिया, फिर बुड्ढा नहीं तो क्या जवान हूँ? ऊपर की कहावत मुझे बहुत ही सार्थक जँची, लगा जैसे बीबी ही जिन्दगी है।

सभी प्रयत्न किए, सफलता न मिली, अन्त में माननीय स्वास्थ्य मंत्री उत्तर प्रदेश श्री ठाकुर हुकुमसिंह जी से मैंने अपनी अवस्था बतलाई उन्हीं की कृपा के फलस्वरूप हमारी धर्मपत्नी को प्राणदान मिला। भुवाली सैनीटोरियम में उनको रख आज मैं इस योग्य हुआ हूँ कि प्रस्तुत पुस्तक के लिए सामग्री एकत्रित कर प्रकाशन की व्यवस्था कर पाठकों के समक्ष उपस्थित कर सकूँ।

अन्त में माननीय स्वास्थ्य मंत्री ठाकुर हुकुमसिंह जी को धन्यवाद देते हुए प्रस्तुत पुस्तक पाठकों की सेवा में भेंट है।

सम्वत २०१५
प्रथम दिन आसाढ़
शिवराज

रामचरन शर्मा
बहादुर गंज (नेपाल)
पो० रामदत्तगंज जि० बस्ती

बैलून का धड़ाका

काठमाण्डू में अचानक बिगुल बजते ही सभी नागरिकों के हृदय किसी भावी दुर्घटना की आशंका से काँप उठे। राजधानी में जो जहाँ थे सभी "स्टैन्ड स्टिल"* हो गए। पूर्ण सतर्क, यदि कोई चलता फिरता नजर आ रहा था तो सैनिकों का दल। आतंक का साम्राज्य छा गया, ऐसे ही समय में मनुष्य आस्तिक होता है जब अपने को हर तरह असहाय पाता है, स्फुटित स्वर में पशुपति-नाथ की दुहाई देने की भी शक्ति नागरिकों में नहीं रही, मन ही मन सभी कह रहे थे पशुपति-नाथ ! रक्षा करो।

राजकीय सैनिकों ने चारों तरफ से महाराजा मोहन शमशेर का प्रासाद सिंह दरबार घेर लिया। चल चित्र की भांति सभी अपने अपने कमाण्डर के निर्देश पर कार्य कर रहे थे किन्तु बात क्या है यह किसी को नहीं पता। किसी की समझ में कुछ नहीं आ रहा था, स्वर्गीय महाराजा चन्द्र शमशेर के पुत्र महाराजा मोहन शमशेर के विरुद्ध विप्लव, यह संभव कैसे ? शहीद शुक्रराज शास्त्री, धर्म-भक्त दशरथ चन्द्र, गंगा लाल के फांसी पाने के बाद किसकी मजाल जो राणा शासन के विरुद्ध आवाज भी उठाने का साहस कर सके।

नेपाल हिन्दू राष्ट्र होने के कारण जनता का धर्मभीरू होना स्वाभाविक ही है, धार्मिक लोग प्रेतात्मा को भी मानते हैं, वे सिंह दरबार के इर्द गिर्द पहरे की चौकसी को ध्यान में रख,

*ज्यों का त्यों रुक जाना

चट से इस निश्चय पर पहुँच गए कि यह काम मनुष्य का नहीं बल्कि शहीदों की प्रेतात्मा का है। बिगुल फूँकने वाले से पूछा गया, क्या बात है, जवाब मिला कांग्रेस आयो! धार्मिकों ने अपने अनुमान को बिलकुल सत्य समझा। नेपाल की राजधानी में जिसका प्रहरी चारों तरफ से स्वयं हिमालय है किसी तरफ से सैनिक आक्रमण की आशंका भी तो निर्मूल है; हाँ, कुछ लोगों की आँखें आसमान की ओर अवश्य थीं; वे समझते थे शायद हवाई आक्रमण हो। बिगुल फूँकने वाले को झकझोर कर एक सैनिक अधिकारी ने पूछा—'कहाँ छै (है) जवाब मिला—भित्र (भीतर)।

बड़ी सतर्कता के साथ बाअदब चार कमाण्डिङ्ग जनरल्स सिंह दरबार में घुसे, साथ में बिजुली फौज के सैनिक अपने अधिकारियों के इशारे पर चल रहे थे। हुजूरिया से पता चला महाराज शयनागार में हैं। चारों जनरल्स ने कहा—महाराजा से बिनती चढ़ाओ, हम उनके दर्शन करना चाहते हैं। महाराजा के आदेश से चारों जनरल्स सामने पहुँचे, झुक कर सलाम किया और कहा धर्मावतार! कांग्रेस दुश्मन दरबार के अन्दर है, आदेश हो हम उसको गिरफ्तार करके हुजूर के चरणों में गुजारें? महाराजा ने हाथ उठाया ही था कि तत्काल एक सैनिक अधिकारी ने आकर समाचार सुनाया। महाराज टंक प्रसाद आचार्य जेल से गायब हो गए। महाराज मोहन शमशेर को गश आ गया, रनिवास में मातम सा छा गया जब गुलाब जल छिड़क कर महाराजा को होश में लाया गया तो व्यग्र हो बोले—पूछो टंक प्रसाद क्या चाहते हैं? गद्दी या हमारी जान, पुनः आँखों पर पर्दा छा गया, बल देकर आँखें खोलीं जिधर नजर दौड़ाएँ उधर ही आचार्य की तस्वीर? जो कह रही थी हमें गद्दी और जान दोनों ही नहीं चाहिए हमें सुशासन चाहिए? महाराजा ने विक्षिप्तता में ही कहा—

पकड़ो टंक प्रसाद को,जाने न पावे,अब मुझे ब्राह्मण हत्या करनी ही होगी। आदेश महाराजा का,आदेश ही है, वह चाहे जिस अवस्था में दिया गया हो। पूरा सिंह दरबार खाली कर दिया गया कांग्रेस की तालाश शुरू हुई। वास्तविक परिभाषा शंका और भ्रम की क्या है यदि उस समय तलाशी करने वालों से पूछी जाती जिन्होंने न केवल दरबार के कमरों मात्र को तलाशा बल्कि कमरों में स्थित कपड़ों के कैबिनेट तथा शृंगार मेज की दराजों तक में कांग्रेस-रूप-धारी-मनुष्य की तलाश की, फिर भी वह न मिला। सभी परेशान!

एक दासी जो काण्ड के आरम्भ से लेकर अब तक मूर्तिवत खड़ी थी उसके पैर उठे वह दौड़ी हुई आई और महाराजा के चरणों में गिर कर गिड़गिड़ाती हुई बोली—दयानिधान दया कर जान बख्शिए। उस समय की हर हरकत डरावनी प्रतीत होती थी, सभी खामोश थे महाराजा का हुक्म हुआ बताओ, तुम्हे माफ किया जायगा। उसने कहा—दयानिधि! हिन्दुस्तान से खिलौनों के साथ कुछ खिलौने ऐसे आए थे जो गुब्बारे की शक्ल के थे जिनमें से एक बहुत बड़ा रंग-बिरंगा था, उससे मैंने अपने रहने के कमरे को सजाया था। डर से उसका सारा बदन काँप रहा था, आवाज रुक गई। हुक्म हुआ, जल्दी कहो क्या कहना चाहती हो, उसने कहा—आज जब मैं कमरे की सफाई कर रही थी उस बैलून में हाथ लगा ही था कि अचानक धड़ाका हो गया उसी धड़ाके की आवाज सुन प्रहरियों ने बिगुल फूँक दिया, गरीब परवर! मुझ अपराधिनि का अपराध क्षमा हो। दासी के इस बयान से महाराजा को अवश्य कुछ शान्ति मिली, तभी जेल से भी समाचार मिला कि राजधानी की भीषण एवं भयावह परिस्थिति के कारण घबराहट में जेल का प्रहरी आचार्य को देख ही नहीं सका, वे जेल में ही मौजूद हैं।

[स्थानीय पत्रकारों को कुछ मसाला चाहिए ही, समाचार हिन्दुस्तान पहुँचा। कलकत्ता के एक स्थानीय पत्र "एडवान्स" ने इस समाचार को जो छापा तो इस समाचार का -'कांग्रेस आयो" शीर्षक ही रख दिया। जिस पढ़े-लिखे व्यक्ति ने भी उक्त समाचार को पढ़ा वगैर कहे नहीं रह सका कि यह वर्तमान सरकार के लिए लक्षण शुभ नहीं। मैंने मान लिया, एक साथ सैकड़ो मुँह से निकली हुई बात होके ही रहती है, टलती नहीं। १९४९ की यह घटना है। १९५० में नेपाली कांग्रेस ने सशस्त्र क्रान्ति की तथा नेपाल में प्रजातंत्र का अँकुर जमा।]

२—प्रजातंत्र का डंडा

नाटा कद, गोरा रंग, चौड़ा जबड़ा, नाक चपटी, आँखें थीं तो जरूर किन्तु ब्रह्मा ने की थी बहुत बड़ी कंजूसी आँखें देने में। मूँछें एक ही नजर में गिनी जा सकती थीं। पायजामे के ऊपर एक खाकी कमीज पहनें, नंगे पाँव, खाली सिर एक व्यक्ति ने एक लम्ब-तड़ङ्ग आदमी को पहले तो अनगिनत थप्पड़, लात लगाए जब थक गया तो उसका जूता निकाल कर लगा उसी के तड़ातड़ उड़ाने। मार खाने वाला इस कदर डर गया था कि वह इतना भी कहने का साहस नहीं कर पाता था, आखिर आप मुझे मार क्यों रहे हैं ?

कुछ नौजवान बढ़े पूछने के लिये, पूछा—सिपाही साहब इसको क्यों मार रहे हो, इसकी क्या गलती है ? वह और खौंखिया उठा, बोला—तुम साला सब बदमाश है हम तुम शबका झेलखाना मा जक देय का है। कुछ लोग उत्तेजित अवश्य हुए किन्तु अनुभवी लोगों ने कहा—भैया पहिले भारत मा दुईचारि विगहा खेत कै इन्तिजाम कइ लेव तब एन से रारि करो। सफेद पोश, एक शिक्षित युवक ने कहा—क्या कहते हैं बड़का काका क्या कानून इनके लिये नहीं है। क्या इनके कहने मात्र से ही सरकार हमको जेल में ठूँस देगी। क्या सबूत (प्रमाण) इनको नहीं देना पड़ेगा ? काका आप नहीं जानते, अब राणाशाही खत्म हो गयी अब हमारे यहाँ प्रजातंत्र है, स्वतंत्र न्यायालय, जहाँ

पहुँच कर हम और ये दोनों बराबर हैं। ये सभी बातें सुनकर वह व्यक्ति सभी को गाली देता हुआ भीड़ से गायब हो गया।

नैपाल पाड़े हँसे, बोले—भैया तू इन्टरेंस पास हौ। इ कुलि तू जानौ लेकिन हम तौ इहै जानित है कि हमरे लोगन कै राणा-शाहिए मा तीन चार पुस्त नीक निबहा। हम्मै परजातन्तर वरजा-तन्तर तो मालुम नाही है हाँ ई जानित है "टोपी टोपी एक।" इहै सोचि कै येय हम्मै फटहा मूँजी कहत है, हम एनका हजूर सरकार कहि है आपन दिन काटि लेइत है। हम तौ पढ़ेव एतना नाही कि हिन्दुस्तान चला जाई नौकरी कइकै दिन काटी। नैपाल पाड़े मुस्कराए उनकी मुस्कराहट में एक वेदना थी, बोले "जाही विधि राखै राम वाही विधि रहिए।"

श्याम बोला—बड़का काका अब वे दिन गए जब ये लोग जो चाहते थे कर लेते थे।

नैपाल पाड़े बोले—बबुआ ऊ दिन गय नाही बलुक कहो, आय। नेता लोग कहत हैं अब ही परजातन्तर लरिका है, हम कहित है जब कंस के लेखा लरि कइयै मा एकरई हालत है तो भैय्या इ हमरे समझै मा नाही आवत की भला ई तोहार परजा-तन्तर जवान होई तौ कौन दशा करी।

श्याम ने कहा—बड़का काका प्रजातंत्र को आप कंस न कहिये बल्कि कृष्ण कहिये जो अपने शैशव काल में ही पूतना-रूपी अन्याय-अत्याचार को समाप्त करने में समर्थ है। इसने हमें राजनैतिक स्वतंत्रता प्रदान की है जिसके अनुसार हमें बोलने की पूर्ण स्वतंत्रता है हम बड़े से बड़े अधिकारियों तक की उचित आलोचना करने को आजाद हैं।

नैपाल पाड़े ने उत्तर में केवल इतना ही कहा, "भैया तोहरे पढ़े लिखे लरिकन का समझावै भरकां हमरे अक्किल कहाँ है" और चुप हो गये।

श्याम भारतवर्ष के स्वतंत्र वातारण में शिक्षा प्राप्त कर रहा था, वह सोच रहा था अब हमारा देश भी स्वतंत्र हो गया है किसी प्रकार बी० ए० करके अपनी सरकार से छात्रवृत्ति के लिये प्रार्थी होकर उच्च शिक्षा प्राप्त कर, स्वतंत्र नेपाल की सरकार का मैं भी एक उच्चाधिकारी होऊँगा। हमारे गाँव का जमींदार भी अब हमारे खानदान का अनादर नहीं कर सकेगा। समानाधिकार के ख्याली पुलाव ही में वह मस्त था। वह सबको समझाता देखो! हमारी स्वतंत्रता एक अनुपम है। कौन सा ऐसा देश है जहाँ के नरेश ने जनता को आज़ादी दिलाने के लिये स्वयं विप्लव किया? यह प्रश्न जब विश्व के इतिहास के छात्रों के समक्ष आयेगा तो सभी का एक ही उत्तर होगा, नेपाल! स्वर्गीय महाराजाधिराज श्री त्रिभुवन वीर विक्रम शाह जू देव का वही चित्र जिसे श्याम क्रान्ति-काल में अखबारों में बराबर देखता था उसके सामने आता और उसका मस्तक नत हो जाता।

गंगा स्नान की छुट्टी बिताकर श्याम पुनः गोरखपुर जाने की तैयारी कर रहा था। नैपाल पाड़े चौपाल में बैठे श्याम के पिता से लक्ष्मण घाट मेले में घटी घटना को शुरू से आखिर तक बता कर बोले "हम तौ श्याम कै नाम तिरभुवन भैया परजातन्तर राखि देहिन है ऊ परजातन्तर कै बात बहुत करत हैं।"

तिरभुवन पाड़े कुछ कहने ही वाले थे कि वही व्यक्ति चार पाँच अपने ही नमूने के आदमियों के साथ चौपाल में दाखिल हुआ। नैपाल पाड़े अपनी वाक पटुता से हमेशा बाजी मार ले जाते। उनका कहना था 'जइसै छोट बाबा बइसै बड़ा बाबा' उनका संबोधन सिपाही के लिये भी हजूर सरकार, जिलाधीश के लिये भी अगर दर्जा की बात आए तो एक दर्जा आगे ही कहते थे जैसे सिपाही को हवलदार साहब। देखकर, तपाक से स्वस्ति करके बोले—वाहरे हमरे लोगन कै भागि आज थान्हेदारौ साहेब कै

चरन इहां परिगै। उक्त व्यक्ति की तरफ इशारा करके थान्हेदार साहेब ! राज होय, सरकार ? उसने कहा—"हम थानेदार नाहीं है।" दूसरे ने कहा "हवलदार साहब कहो।" नैपाल पाड़े ने बड़े ही अन्दाज से कहा—"सरकार कै बाति एकै दरजा कै तौ कमी है भला हमरे बमने कै बाति झूठ होय सकत है।"

हवलदार ने क्रूर हँसी हँसकर कहा—अइले हम ठूला डाका समातेगा (बड़ा डकैत पकड़ेंगे) नैपाल पाड़े ने कहा—गरीब परवर ! तब तौ हमार बात पूरा होय जाई।

श्याम अपनी माँ से सूट के लिये झगड़ रहा था। माँ कहती थी बेटा जो कपड़े पहिन रहे हो उसी को देखकर जमींदार की आँखें फूटी जा रही हैं भला तुम साहेबी कपड़ा पहिनोगे तब तो वह जिन्दा ही नहीं रहने देगा। श्याम उत्तेजित हो गया बोला—जमींदार के लड़के को तो गरीबों का खून चूस कर नाच सिनेमा देखने, व्यभिचार करने, शराब पीने का हक है, हमको अपनी मेहनत की कमाई के पैसों से अच्छे कपड़े पहनने का भी हक नहीं ? यह प्रजातंत्र का युग है हम अवश्य पहनेंगे उसकी एक आँख फूटने को हो तो दोनों फूट जायँ मुझे इसकी चिन्ता नहीं, यह कहता हुआ श्याम दरवाजे पर आ खड़ा हुआ।

पुलिस का हवलदार सभी सिपाहियों के साथ उठ कर खड़ा हो गया। श्याम को हाथ उठाकर बुलाया और आते ही बाँध लिया। श्याम ने पूछा—"आप लोग मुझे किस जुर्म में गिरफ्तार कर रहे हैं; वारन्ट दिखाइए ?" हवलदार बोला—"इस सबका जवाब थानेदार देगा।" श्याम ने हवलदार की तरफ देखा तो मालूम हुआ यह वही व्यक्ति है जिसको कि एक आदमी को मारते हुए उसने रोका था। देखते देखते श्याम के अन्य दो साथी और वह व्यक्ति जो पीटा गया था सभी गिरफ्तार होकर आ गए। हवलदार ने कहा—"देख,मूजी मैं सिपाही हूँ !" आज इसने

काले तीन फीते अपने दाहिने बांह में लगा रखा था। मालूम हुआ कि उस दिन की मार और आज की गिरफ्तारी का जुर्म सभी का यही था कि इन लोगों ने एक हवलहार को सिपाही कह दिया था तिस पर श्याम ने तो हवलदार को सिपाही कहते हुये मारने का कारण भी तो पूछा था, यह क्या कोई मामूली अपराध है ! पुलिस के काम में दस्तन्दाजी !

नैपाल पाड़े ने हजूर, सरकार, गरीब परवर, करुणानिधान, का पूर्ण सहस्त्र-नाम पढ़ डाला। दया धर्म जिसमें छू तक नहीं गया था उस पर दयानिधान धर्मावतार की बौछार कर दी, पत्थर पिघल जाता है किन्तु हायरे इन्सान तू न पिघला ? फिर पान फूल की बातचीत शुरू हुई। दो बड़के (दो हजार) से एक पर आए। तिरभुवन पाड़े ने तय कर लिया कि सर्वस्व बेचकर दूँगा, चाहे लट्ठा काट कर वहीं भारत में ही जाकर मेहनत मजदूरी करनी पड़े किन्तु अपने प्रिय पुत्र को इन कसाइयों के हाथ न जाने दूँगा। श्याम की नव-विवाहिता पत्नी ने अपने हाथ के कंगन सुहाग बिन्दी तक लाकर ससुर के हवाले कर दिया। तह करके नोटो को पाकेट के हवाले करते हुए हवलदार ने कहा—"अभी छोड़ने से थानेदार नाराज होगा,थाना से हम इसको छोर देगा।"

गाँव के जमींदार जिसने कि श्याम के खिलाफ थाने वालों को उभाड़ा था समझा कहीं गोली कची न पड़े। फौरन नौकरों को एक बकरा काटने का हुक्म देकर आया। मार्ग में खड़ा होकर कहा—हवलदार साहब भोजन तैयार है जा कहाँ रहे हैं, भोजन कर लीजिए तब जाइए ? एक ही रस्सी में चार पाँच आदमियों को बाँधकर जिसमें श्याम भी था लेकर चले जमींदार के दरवाजे पर। श्याम ने ऐसी हालत में जमींदार के दरवाजे पर जाना मुनासिब नहीं समझा और उसने जाने से इन्कार किया, लेकिन पुलिस वालों ने उसकी एक न सुनी। जमींदार के घर

वालों ने श्याम को रस्सी से बँधा देखा, उनका हौसला पूरा हुआ, चलते समय सौ सौ के पाँच नोट हवलदार को देते हुए जमींदार ने फरमाया—"ये रकम थानेदार साहब को नजर कीजिएगा और कहिएगा कार्रवाई इतनी पक्की होनी चाहिए कि छूटने न पावें। मैं मदद को तैयार हूँ नहीं तो उनकी नौकरी ले बितेगा, पढ़ा लिखा है। यह भी कहियेगा कि हमारा इस विषय में कोई स्वार्थ नहीं है हम तो सिर्फ यही चाहते हैं कि अभी हमारा आप लोगों का कुछ दिन और साथ रहे।"

श्याम थाने पर पहुँचा तो बहुत से लोग देखने आये। मुख्य कारनी मधई भगत जिन्होंने लक्ष्मण घाट के भरे मेले में हवलदार को सिपाही साहब कहने का अपराध किया था उनको छोड़कर उसमें एक भी आदमी नहीं था जो आधे मर्द की भी ताकत रखता हो ? सभी देखकर हँस पड़े, एक ने तो यहाँ तक कह डाला, "जिसको पुलिस पकड़े वह डाकू तो हो ही नहीं सकता यह हमारा बहुत पुराना अनुभव है। पुलिस को देख जितनी दूर डाकू भागते हैं, उससे दूनी नैपाल पुलिस डाकुओं को देखकर भागती है फिर दोनों की भेंट कैसे हो सकती है। उसका तो नारा है, माल मिले, जान की हिफाजत हो, फिर बिला वजह उन्हें क्या पड़ी है कि वे डाकुओं से भिड़न्त कर अपनी पत्नियों को वैधव्य की वसीयत करें।"

श्याम के सहित अन्य सबके दोनों पैर काठ में डाल दिये गये तथा उसको "डी मारलाइज" (अनैतिक) करने के लिये कुछ ऐसे लोगों पर जो पहले ही से पुलिस की हिरासत में थे लगे डंडे बरसाने। श्याम का कोमल हृदय काँप उठा अभी उसने कहाँ कोई सर्दी गर्मी देखी ही थी ?

जमींदार का पैगाम मय हरे हरे पाँच नोटो के थानेदार को मिल ही चुका था। हुक्म हुआ हाजिर करो मुलजिमों को। सभी

जब थानेदार के सामने पहुँचे तो उनसे एक ऐसे कागज पर हस्ताक्षर करने को कहा गया जो पहले से ही तैयार था। श्याम ने कहा यह क्या है ? थानेदार ने कहा तुम्हारा बयान। श्याम—लेकिन अब तक मैंने तो कोई बयान नहीं दिया है। हवलदार ने कहा—हुजूर यो नेता है, ये भनता (कहता) है प्रजातंत्र है। थानेदार हँसा बोला अच्छा तो लाओ इसके लिये प्रजातंत्र का डंडा। श्याम के रोंए खड़े हो गये जब उसने लपलपाती हुई चमड़े की मूँठ लगी हुई एक बैंत सामने देखी। थानेदार ने कहा—दस्तखत करते हो कि.....

श्याम ने सोचा हिन्दू धर्म के अनुसार बाँधकर जहाँ पशु को भी मारना पाप है वहाँ ये लोग काठ में ठोंककर डंडे उड़ाते नहीं डरते, उसने मुलजिमों को जानवरों की तरह पिटते देखा था, वह डरा और उसने हाथ बढ़ा दिया।

दस्तखत हो जाने के बाद श्याम का वह फर्जी बयान सुनाया गया तो उसकी आँखों के सामने अँधेरा छा गया, वह गश खाकर गिर पड़ा, उसके ऊपर कई खून डकैतियाँ, जिसको उसने स्वीकार किया था तथा अन्य को साथी बताया। उसे होश में लाकर थानेदार ने कहा—अब काटने से छुट्टी होगी नखरा करने से नहीं। देखो अब तुम्हारा चालान अमीनी अदालत (न्याय विभाग) को जा रहा है, इसी बमूजिब तुम वहाँ भी बयान करना। श्याम को थानेदार की उस बात से तसल्ली हुई उसने समझा, शायद न्याय-विभाग हमारे बयान को लेकर हमें अपने को निर्दोष प्रमाणित करने का मौका दें। उसको याद आया स्वतंत्र-न्यायालय की स्थापना क्रान्ति के बाद नेपाल में हो चुकी है।

थाने से जब चालान अमीनी अदालत को आया तो न्यायाधीश (सुब्बा) ने पूछा—थाने में जो बयान तुमने किया वह ठीक है ! श्याम ने कहा—बिलकुल नहीं ! न्यायाधीश ने कहा—क्या

यह दस्तखत तुम्हारा नहीं है ? श्याम—दस्तखत जरूर हमारा है किन्तु यह स्वेच्छा से नहीं किया गया है।

न्यायाधीश को इस बात पर कि बयान थाने का ठीक है जोर देते देख श्याम के पैर के नीचे की जमीन खिसकने लगी, याद आई नेपाल पाड़े की बात "टोपी दोपी एक है।" श्याम का चालान अमीनी अदालत में सुन पैरवी के लिये नेपाल पाड़े खुद आये हुये थे। न्याय मूर्ति, दयानिधान, धर्मावतार की झड़ी लगा कर साथ साथ कुछ पान फूल से राजी कर लिया। श्याम बिलकुल सचसच बयान करना चाहता था किन्तु उससे भी उसकी बचत नहीं हो रही थी। यद्यपि यह बात सत्य थी किन्तु बुद्धिगम्य नहीं, भला एक हवलदार को अनजान में सिपाही कहने के कारण वह एक व्यक्ति के जीवन को बरबाद करने का जघन्य पाप कैसे कर सकता है। रही बात जमींदार द्वारा श्याम को फंसाने के लिये पाँच सौ के पुरस्कार की, श्याम के पास अदालत में इसका क्या सबूत ? झूठ को वह सत्य से नहीं समाप्त कर सकता था। बयान बदला उसे पुलिस से दुश्मनी दिखानी ही पड़ी जो बिलकुल झूठ थी।

जब न्यायाधीश ने कहा—इन सबको बेड़ी डालकर जेल पहुँचाओ, नेपाल-दण्ड-विधान के अनुसार ये लोग जेल से ही सफाई पेश कर सकते हैं। कानून इनको छोड़ने की इजाजत नहीं दे रहा है क्योंकि इन्होंने थाने में अपना अपराध स्वीकार किया है ? यह सुन सभी दंग रह गये।

श्याम चौंका, यदि पुलिस के लिये गये बयान पर ही बेड़ी डालकर जेल में रखा जाता है तो न्याय विभाग की स्वतंत्रता किस काम की। श्याम ने पूछा—क्या श्रीमान मुझे जमानत पर नहीं छोड़ सकते हैं ? एक ही जवाब नहीं, (नेल) बेड़ी डालकर जेल में रखकर सबूत प्रमाण लिया जायगा।

श्याम को अपनी विवशता पर आँसू आ गये। पुलिस विभाग का प्रजातंत्र का डंडा तो बेंत ही का था और उन लोगों ने सिर्फ दिखाकर ही रख दिया था किन्तु न्याय विभाग का तो लोहे का आया और श्याम के कोमल पैरों में पड़ गया। श्याम को सिपाही जेल की ओर लेकर चले तो वह सोच रहा था क्या ईश्वरीय न्याय भी ऐसा ही होगा ? पैर की बेड़ियाँ जवाब दे रही थीं नहीं, नहीं, नहीं !

महीनों बाद जब सफाई के लिये तिरभुवन पाड़े पहुँचे तो उनके साथ भारती प्रसाद एम० ए०, एल-एल० बी०, बी० टी० प्रिन्सिपल डी० ए० वी० कालेज गोरखपुर भी थे। उनको देखकर सभी चौकन्ने हो गये। जिस समय पुकार हुई प्रिन्सिपल ने कालेज का रजिस्टर सामने रख दिया, हर वारदात में वह स्कूल और बोर्डिंग दोनों में हाजिर था।

३—ग्रहण

एक पौराणिक कथा है कि जब सुरों और असुरों ने मिलकर समुद्र का मंथन किया तो उसी में से अमृत निकला। भगवान ने सोचा परिश्रम के अनुसार अमृत पर सुरों और असुरों का समानाधिकार है। यदि असुरों ने भी अमृत पान कर लिया तो फिर पुण्य का पाप के ऊपर विजय कर पाना असम्भव हो जायगा। अमृत के गुण को समाप्त करने से हमारी भी तो मर्यादा घटेगी, अस्तु! स्वयं भगवान ने मोहिनी का रूप धारण कर असुरों को शराब पिलाकर बेहोश कर दिया और देवताओं को अमृत पान कराने लगे। राहु नाम के राक्षस का नशा कुछ कम हो गया था, उसे कुछ चाल मालूम हुई वह भी देवता का रूप धारण कर देवताओं की जमात में शरीक हो गया। भगवान ने उसे भी अमृत पान करा दिया। सूर्य और चन्द्रमा को मालूम हो गया उन्होंने भगवान को आगाह किया। भगवान ने चक्र मारा राहु का सिर धड़ से अलग हो गया। सिर हँसा बोला—भगवान अब तो मैं दो हो गया। अपनी भूल पर पश्चाताप करते हुये बोले जाओ सात ग्रहों में तुम भी मिल जाओ देवताओं के साथ तुम्हारी भी पूजा होगी।

राहु ने घूर कर चन्द्रमा और सूर्य की तरफ देखा उसकी आँखें कह रही थीं, तुम दोनों ने हमारा भण्डा फोड़ दिया है हम इसका बदला तुमसे लेंगे। दोनों ही देवता काँप उठे बोले अब भगवान तुम्हीं हमारी रक्षा करना!

संवत २०१३ मार्गशीर्ष कृष्ण अमावस्या रविवार २, दिसम्बर १९५६ को भगवान भास्कर को चाहे यह कहिये कि उन्हें अपने शत्रु का निश्चित ज्ञान होने के नाते ही १२ घण्टा पूर्व ही बेध का पता चल गया था या देवता होने के किन्तु मुझे अपने बेध का बिल्कुल पता नहीं। डाके के आतंक से सारा कस्बा बहादुर गंज त्रस्त था। दिन भर अधिकारियों को साथ ले कर स्थानीय नागरिकों को ढाढ़स बंधाता रहा, सरकार द्वारा सुरक्षा की जो व्यवस्था थी वह अपने ही भर को पर्याप्त नहीं कही जा सकती थी। सरकारी अधिकारियों की अदूरदर्शिता, खजाने को तौलिहवा भेजा जा रहा है तौलिहवा से फौज आ रही है इस समाचार से सबका दिल दहल गया। सबकी नींद हराम हो गई, तंद्रा में १९५० के आन्दोलन के अनुभवियों को धाँय धाँय गोली चलने की आवाज सुनाई देती। कोई कहता यह राणा लोगों की अपनी गई हुई सत्ता को वापस लेने की चाल है, कोई कहता उँ हूँ यह लाल झण्डा वाले कम्युनिस्ट हैं। फिर कम्युनिस्टों के बारे में अटकल बाजियाँ चलतीं। उनका नारा है रोटी, कपड़ा और मकान। यह तो ठीक है किन्तु मन्दिरों और मस्जिदों को गिरा दिया जायगा, पूजा-पाठ कोई नहीं करने पायेगा। ईश्वर को वे नहीं मानते। कम्युनिस्ट विरोधी प्रचार आये दिन हुआ ही करते हैं उसी आधार पर लोग अपना अपना विचार प्रकट करते। रुई न सूत जुलाहों से लट्ठम-लट्ठा। दो दल हो जाते, कोई कहता कम्युनिस्ट अच्छे हैं कोई कहता बुरे। दो दलों के विवाद को समाप्त करके कोई कहता, सुनो कम्युनिस्टों का झण्डा लाल होता है, लाल रंग का झण्डा अब तक तो दिखाई नहीं दिया। काँग्रेसी आये थे तो अपने आने के पहले ही भोला बाबू, रामबरन शर्मा को झण्डा दे गये थे। फिर होता यह सब कुछ नहीं, डा० के० आई० सिंह राणाओं से समझौता करके आ रहे हैं। हमारे परिवार के सदस्यों का भी होश

1956

उड़ गया। श्री चन्द्र भूषण पाण्डेय, गोपाल शंशेर ने कब्जा करने के बाद उनका बड़ा ही आदर किया था क्योंकि १९५० की क्रान्ति के संचालकों में से एक मैं भी था। अब वह बात भी नहीं। मैं डाक्टर तथा राणाओं, दोनों का विरोधी हूँ। मेरे बहुत कहने पर भी हमारे परिवार के लोगों ने स्त्रियों, बच्चों को तो घर से अलग कर ही दिया। घर में केवल हमारी धर्मपत्नी रह गई थी। गाँव के लोगों को तसल्ली देकर जब मैं घर आया तो हमारी पत्नी बोली—आपने डाक्टर साहब से विरोध करके अच्छा नहीं किया। दस साल के साथ और व्यवहार को एक मिनट में आपने समाप्त कर दिया, दुःख में आपने उनका साथ दिया आज जब सुख का समय आया अलग हो गये। हमारा और डाक्टर साहब का व्यवहारिक सम्बन्ध बहुत ही अच्छा था। हमारी पत्नी ने कहा—अच्छा होता हम लोग लखनऊ चले गये होते। हम लोग लखनऊ दवा कराने जाने वाले ही थे। यह अफवाह उड़ी कि चिट्ठी आई है जिसमें लिखा है आगामी शनिवार को ८-३० शाम हम लोग गयाप्रसाद शाह को लूटेंगे। मैं कितना ही तर्क-वितर्क करता किन्तु इस निश्चय पर नहीं पहुँच पाता, आखिर यह काम हो किसका सकता है। कभी २ यह काम मुझे मजाक मालूम होता, किसी गुन्डे का। क्योंकि ऐसी हरकत न तो किसी राजनैतिक बुद्धि का व्यक्ति कर सकता है न कोई डकैत ही।

कस्बे बहादुरगंज में सरे शाम सन्नाटा छा गया। यह देख कर मुझे फिर चिन्ता हुई, कारण, मुझे दिन डूबते यह खबर मिली थी कि पास ही के एक जमींदार ने चालीस पचास गुन्डों को असामियों के दमन के लिए इकट्ठा कर रक्खा है। मैंने सोचा—कस्बे की हालत ऐसी है,यह न हो वही सब चले आवें और लूट पीट कर चल दें, खतरा सबसे पहले हमारे घर को होता क्योंकि हमारे घर से पूरब किसी का मकान नहीं है। गांव के जमींदार

ठा० गया प्रसाद शाह की कोठी में भी कुत्ते रो रहे थे। आज वहाँ भी केवल एक बूढ़ा बैठा इस बात की ताक में था कि किसी तरफ शोर-गुल हो और मैं चलता बनूँ। उनके सारे आदमी कृष्ण-नगर उनके वर्त्तमान आवास पर चले गए थे।

राज नेपाल के बड़े जमींदारों में यह आम रिवाज होता है कि वे डकैतों को सिपाही, सिखार के नाम पर पालते हैं जिसका काम होता, दिन को दिखलाने के लिए थोड़ा सा काम, रात को डकैती। फिर भी किसी अधिकारी की हिम्मत नहीं जो उन पर आँख उठाए। क्योंकि अधिकारियों के हाथ के बर्तन तो होते हैं बड़े जमींदार ही, अगर अपराधों के वृद्धि की बात चली तो एक दम अलग बुलाकर कान में कहा—सरकार.....हाँ हाँ समझ गए, समझ गए, कहकर चल दिया फिर, जमींदारों और अधिकारियों का नेताओं और अगुओं को फँसाने का सम्मिलित प्रयत्न आरम्भ। दूसरे की कौन सुनता है, उनके आदमी जिसको चाहे लूटें। मुझे अपने ही मकान पर खतरे का अनुभव हुआ। कस्बे के चौकीदार को लेकर मैं पुलिस चौकी बहादुर गंज गया, नायब दारोगा से सारी बातें बतलाई उनको कुछ ढीला देखकर मैंने पूँछा—पहरे का आपने समुचित प्रबन्ध किया है ? उन्होंने कहा हो रहा है। मैं यह कहता हुआ कि जनता में भी अपनी सुरक्षा का प्रबन्ध है, फिर भी आप यह आदेश दें कि गस्त वाले हमारे घर तक जरूर जाय मैं रात भर जागूँगा। थानेदार ने जैसा कहा वैसा ही किया। ग्रहण का बेध भगवान भास्कर के साथ साथ यहाँ की जनता पर भी था, उनको आशंका राहु से थी तो जनता को डाकुओं से।

सारी रात बीत गई, कोई घटना नहीं घटी। एक आदमी दौड़ा हुआ आया बताया कि जमींदारों द्वारा लाए गए गुण्डों ने

एक गांव के "अगुआ" को मार कर गिरा दिया है एक को लापता किए हुए हैं। उस आदमी ने यह भी बताया कि यदि आप कोई प्रबन्ध नहीं करते हैं तो हम लोगों की बड़ी दुर्दशा होगी, यह भी बताया कि गुण्डों की तादाद चालीस-पैंतालीस से कम नहीं। मैं दौड़ा नायब दारोगा के पास पहुँचा। मुझे आश्चर्य हो रहा था,उस जमींदार की हिम्मत पर, डाके की इतनी जबरदस्त हलचल। गोश्वारा के सुब्बा (ए. डी. एम.) पास ही कृष्णनगर में टिके थे। फिर मैंने सोचा यदि अधिकारियों की हिम्मत बड़े-आदमियों के आदमियों को गिरफ्तार करने की होती तो डकैती तो बात की बात में रोकी जा सकती है।

मेरे कहने पर नायब दारोगा गांव में चलने को तैयार हो गए। बीमार तो हमारी पत्नी बहुत दिनों से रहती है किन्तु उस समय जागरण की वजह से और हालत बिगड़ गई थी, पहले तो उन्होंने अपनी अस्वस्थता को ही सामने रखा, देखा कि नहीं ही रुकेंगे तो कहा—आज रविवार है, जो हमारे परिवार के लिए अशुभ माना गया है, फिर आज ग्रहण भी लगेगा। "मैं जिसके लिए जा रहा हूँ उसके लिए हो सकता है शुभ हो" कहता हुआ मैं चल दिया।

गाँव के पास पहुँचते ही, मार मार, लिया है, लिया है, की आवाज आने लगी। मैं पीछे था मैंने देखा थ्री-नाट-थ्री रायफल धारी सिपाही हमारी तरफ भगे चले आ रहे थे, थानेदार का जूता भागते समय निकल कर गिर पड़ा था, था तो वह केवल सौ गज की दूरी पर किन्तु उसे उठाकर लाने की हिम्मत छः कान्सटेबुलों, जिस में दो रायफल धारी भी थे, किसी की नहीं हुई। दो चार आदमी जो जनता के थे मुझसे कहने लगे शर्मा जी आप लोग कहते हैं डाकुओं को पकड़ने में जनता को चाहिए

कि वह पुलिस का सहयोग करे। इन लोगों की बुजदिली की यह हालत, जनता सहयोग करने जाय, ये तो भाग कर अपनी जान बचालें मारी जाय जनता। हाँ भाई ठीक कहते हो, यह हमारी जुबान से निकला तो अवश्य, किन्तु हृदय में एक वेदना सी हुई सोचा जिस देश में रक्षक इतने कायर और निकम्मे हों वहां की रक्षा कौन करे भगवान के बिना।

बहुतेरा मैंने थानेदार को ललकारा किन्तु व्यर्थ। मैंने कहा आप अभी यहीं रुकें मैं आता हूँ, मैं जनता की मदद आपको दूँगा। मैं जानता था कि इन बुजदिलों के भागने के कारण, जनता पर आतंक है, फिर भी मैंने पास के एक गांव पंच का घोड़ा लिया, एक आदमी से थानेदार को यह सूचना भेज, कि आप डटे रहिए मैं अभी जाकर मय अ. ना. सु. (ए. डी. यम.) तथा सैनिकों के आप की सहायता में आ रहा हूँ। मैंने घोड़े से कृष्णनगर के लिए प्रस्थान किया, साथ में अ. ना. सु.(ए. डी. यम.) के लिए एक घोड़ा जो शिवानगर के श्री शिव प्रसाद रजोरेजी के यहाँ से मँगाया था, लेता गया।

रास्ते में जब गुरचिहवा के अपने एक मित्र राहिला बाबू से मैं मिला तो वही मालूम हुआ कि कृष्णनगर की परिस्थिति बहादुर गंज से भी दयनीय थी ८ बजे शाम ही को "करफ्यू" लगा देने पर भी सभी भाग भाग कर भारतीय सीमा के अन्दर जा जा कर शरण ले रहे थे। यह भी मालूम हुआ कि घटना कोई भी नहीं घटी।

पहले मैं कृष्ण नगर धर्मशाला में पहुँचा जहाँ सैनिकों के साथ असिस्टैन्ट नायब सुब्बा (ए. डी. यम.) कैम्प कर रहे थे। किन्तु फिर पता चला कि सभी ठाकुर गया प्रसाद शाह के यहाँ मौजूद है। जब मैं उनकी कोठी की तरफ बढ़ा तो मालूम हुआ सभी थाने

पर हैं। थाने पहुँचा, सुब्बा बैठा एक पत्र लिख रहा था बड़े हाकिम के नाम, जिसमें था ठाकुर गया प्रसाद शाह के प्रसंशनीय सहायताके फल स्वरूप भेद खुल गया.....

पहले सोचा भेद के बारे में पूँछें फिर मुनासिब न समझ मैंने अपनी ही बात आरम्भ की सब कुछ बताया और कहा—वहाँ गुण्डे पुलिस पर आक्रमण करने को तैयार हैं, सवारी मौजूद है सैनिकों के साथ आप चलें। वह पाकेट साइज का नायब थानेदार मुझ से पहले ही पहुँच गया था यह देखकर मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा।

असिस्टैन्ट सुब्बा ने मुस्कराते हुए कहा—एक्सक्यूज मी, यू आर डीटेन्ड। आत्म-हीनता की भावना सुब्बा में कूट-कूट कर भरी थी वह अपने को लोगों की दृष्टि में असाधारण समझे जाने के लिए गलत सही अँग्रेजी भी बोलता, हर समय ही बनता रहता था। कुछ अजीब ढंग से मुँह बनाकर बोला—शर्मा जी सभी गिरफ्तार होकर आ गए, अफसोस वे लोग आपको ही अपने दल का नेता बताते हैं इसी से मैं कानूनन आपको गिरफ्तार करने के लिए मजबूर हूँ। मैंने कहा—ठीक है आपको अपने कर्त्तव्य का पालन करना ही चाहिए। हमदर्दी जताते हुए अ० सुब्बा ने कहा—मैंने आपको खबर भेज दिया था कि आप सीमा पार कर जायें। मुझे मालूम हो गया कि प्लान इन लोगों का लम्बा था मुझे फँसाने के लिए। मैंने पूँछा—वे सब कहाँ हैं विश्वास नहीं हो रहा था कि गिरफ्तार किए गए लोग वही गुण्डे हैं। जबाब मिला अभी आपके सामने आ जाते हैं।

मैंने देखा तो मैं दंग रह गया। एक लड़का तेरह चौदह साल का धर्मराज, जो जालिम जमींदार ठा० गया प्रसाद के यहाँ से खाना खर्च पाकर वहीं पढ़ता था, दूसरा रामभरत मिश्र उसी

जमींदार की पुत्री को पढ़ाने वाला ट्यूटर जिसकी मैंने कभी शक्ल तक नहीं देखी थी। उन लोगों में से लड़के से "चिट्ठी मैंने लिखी है" मास्टर से, "मैंने लिखी है किन्तु शर्मा के कहने पर" कहलवाया गया था। क्या दुनिया से न्याय उठ गया।

ऊपर देखा कहा भगवान इतना अँधेर, भगवान भास्कर को देखा वे स्वयं राहु द्वारा ग्रसे जा चुके थे। मैंने कहा भगवान तुमने तो राहु का भण्डा फोड़ किया था.....कष्ट में भी भगवान सूर्य मुस्कराए मालूम होता था जैसे कह रहे हो मैंने तो केवल एक राहु का भण्डाफोड़ किया था तुम ने तो अनेक राहुओं के भण्डाफोड़ किये हैं, फिर ग्रसे जाने से तुम क्यों घबराते हो? रही बात न्याय की जिस मार्ग पर तुमने कदम रखा है उस पर चलने के नाते महात्मा सुकरात को विष पान करना पड़ा, ईसा को सलीब पर खींचा गया, युग पुरुष महात्मा गाँधी को गोली मारी गई, जोन-आफ-आर्क को जिन्दा जलाया गया। उस समय भी कानून था और जो कुछ किया लोगों ने अपनी समझ से न्याय ही किया था। तुम इतने में ही घबरा गए। क्रान्तिकारी होकर कायर न बनो हमारी तरफ देखो ग्रहण के बाद ही मोक्ष होता है।

४—दोहाई, धींग धींगा

चार बजे थे, करीब अभी दो घन्टे रात बाकी ही थी, अगहन का प्रथम पक्ष व्यतीत हो गया था, शरद ऋतु अपनी किशोरावस्था को पार कर पूर्ण युवती थी, कमखाब कीमती दुलाइयों के अन्दर छिपे धनपतियों को इसकी जवानी भले ही लुभावनी लग सकती है, किन्तु जरा वह उन गरीबों से पूँछ कर तो देखें जो जीर्ण-शीर्ण झोपड़ियों में, भूँखे पेट, फटे चीथड़े लपेट कर, जाड़े दिनकर की प्रतीक्षा में ही सारी रात राह देखते ही बिता देते हैं? जिस चारपाई पर मैं सोया था उसका गद्दा इतना मोटा था कि कभी कभी लोभ होता, सोचता कम्बल को बिछाकर क्यों न गद्दा ही ओढ़ लूँ। परन्तु, न मालूम क्यों मैं ऐसा कर नहीं सकता था। हो सकता है उचित न समझता होऊँ। कम्बल हल्का होने के कारण हमारी नींद खुल गई थी। सैनिकों के बूट खटकने लगे, एक सैनिक अधिकारी सूबेदार ने आकर मुझसे नेपाली भाषा में कहा—हुजूर अब चले। सर-सामान तो मेरे पास कुछ था नहीं उठकर खड़ा हो गया बोला कहाँ चलना है। उत्तर में उसने कहा तौलिहवा।

आगे पीछे आठ सैनिकों की एक कतार दांए, आठ ही सैनिकों की एक कतार बांए सभी रायफल धारी। बीच में मैं, तथा चौदह साल का धर्मराज नाम का एक छात्र और अट्ठारह या बीस वर्ष की आयु के रामभरत मिश्र नाम के जमींदार ठा० गया

प्रसाद शाह की पुत्री को पढ़ाने वाले मास्टर। करीब १० गज के फासले पर आगे एक ब्रेनगन उतनी ही दूरी पर पीछे एक स्टेन गन, दो रिवाल्वर धारी सैनिक सूबेदार और जमादार मेरे अगल बगल। पैदल ही अट्ठारह मील तय करके तौलिहवा पहुँचना, उसपर तुर्रा यह कि सदर रास्ता छोड़ कर ले जाना, ऐसा आदेश। हम लोग तो उतने परेशान नहीं हुए किन्तु बेचारे सैनिकों को नदी नाले कटी कुटी धान के खेत की मेड़ों को जो पार करना पड़ा उससे उनके बूट पट्टी उतारते उतारते नाक में दम हो गया।

श्री ५ महाराजाधिराज की सर्व अपराध क्षमा की घोषणा के बाद जब मैं स्वदेश लौटा, अपने घर बहादुरगंज आया तो सुना इस जिले के वर्त्तमान जिलाधीश बाबू कुंज बिहारी प्रसाद सिंह है जिनकी विचार धारा बहुत ही सुन्दर तथा व्यवहार बहुत ही मधुर है कालान्तर में हमारी उनकी मुलाकात बहादुरगंज में ही हुई। उन्होंने मुझसे कहा—यहाँ के नेतागणों का तो काम केवल अधिकारियों की आलोचना करना मात्र है। क्या मैं आप के विचार जान सकता हूँ ? मैंने कहा हमारा अपना सिद्धान्त है सरकार के प्रत्येक रचनात्मक जन-कल्याणकारी योजना में सहयोग देना, सरकार की ऐसी नीति जिससे जनहित में बाधा पहुँचती है उसकी स्वस्थ आलोचना के द्वारा विरोध करना। सरकार द्वारा प्राप्त सुविधा का उपयोग जनता से करवाना और अधिक, उचित एवं आवश्यक मांगों को सरकार के सामने रखना।

एक लम्बी अवधि के बाद बर्बाद गृहस्थी को मुझे फिर से बसाने की चिन्ता थी, किसी भी प्रकार सरकार से असहयोग एवं विरोध के मूड में मैं नहीं था। जिलाधीश बाबू कुंज बिहारी

प्रसाद सिंह ने कहा—तो क्या मैं यह आशा करूँ कि आपका सहयोग मुझे मिलेगा ? मैंने कहा—अवश्य ।

बुद्ध जयंती के अवसर पर नेपाल नरेश की आमद में सड़कों की मरम्मत श्रमदान के द्वारा कराने का निश्चय किया गया। कुछ नेताओं ने विरोध भी किया मैंने इसका पूर्ण समर्थन किया। पकड़ी, बुटहनिया में जो इस उपलक्ष में सार्वजनिक सभाओं का आयोजन हुआ बड़े हाकिम की ओर से, सभी का मैं प्रमुख प्रवक्ता रहा। मेरा सिद्धान्त है इमानदारी से काम करने वालों को प्रोत्साहन मिलना चाहिए, इसी ख्याल से हमारा तथा बड़े हाकिम का परस्पर सहयोग चल रहा था। कालान्तर में मैंने अनुभव किया कि अधिकारी वर्ग में जबरदस्त पार्टी बन्दी चल रही है। जिले के अन्य अधिकारी मुझे बड़े हाकिम की पार्टी का नेता कहते हैं। मैंने अब जिले के हेड क्वार्टर पर अपना आना जाना कम कर दिया इसमें कुछ अपनी मजबूरी भी थी पत्नी की निरंतर बीमारी। अब मैं केवल खास खास मौके पर ही पहुँचता जैसे नरेश या प्रधान-मन्त्री की आमद में। किसी अधिकारी को मित्र कहकर मैं मित्र शब्द की परिभाषा बिगाड़ने की गलती नहीं करूँगा। मित्र के नाते नहीं बल्कि कुछ सोचकर मैं बड़े हाकिम का समर्थन करता, हमारा समर्थन आँख मूँद कर नहीं होता था, बल्कि समय समय पर उनकी गलत नीति का विरोध भी मैं करता था। ठा० गया प्रसाद शाह की, इनकी बड़ी घनिष्टता हो गई कुछ एक जातीय होने के नाते, कुछ इस नाते कि गया प्रसाद शाह इतने बड़े धूर्त हैं कि अपने को महाराजाधिराज का सम्बन्धी हर उच्चअधिकारी से बताते रहते हैं तथा हरएक महीने बाद अपने को मंत्री होने की अफवाह उड़ा दिया करता है, ताकि (अधिकारी डरें,उन पर रोब रहे)। मैंने देखा जितने भी गया प्रसाद शाह के प्रतिद्वन्दी हैं सभी के ऊपर बड़े हाकिम की टेढ़ी नजर

रहती है। मैंने उनको रोका, स्वीकार तो उन्होंने नहीं किया, किन्तु, मैंने अनुभव किया कि उन्होंने हमारी बात मान ली, हो सकता है मुझे ऐसा भ्रम ही क्यों न हुआ हो। गया प्रसाद शाह बड़े इर्षालु प्रवृत्ति के आदमी हैं किसी भी आदमी को वे आगे बढ़ते नहीं देख पाते। चाहे वह धन,मान या बड़ाई,किसी प्रकार की बढ़ती हो। हमारा उनका विरोध तो बहुत पुराना था किन्तु इधर जबसे मैं घर पर रहने लग गया था। व्यवहार में उसे फटकने तक नहीं देता था, फिर भी, वह मौके की तलाश में है, यह लोग मुझसे कहते तो अवश्य किन्तु मैं टाल जाता।

सैनिक सूबेदार जो मेरा चालान तौलिहवा ले जा रहा था जब वह बड़ाहाकिम का अंगरक्षक था कई बार उसने देखा था कि बड़ा हाकिम की नजरों में हमारी क्या इज्जत है। उसने कहा--आपको पहुँचते ही बड़ा हाकिम साहब छोड़ देंगे। जाली मुकदमे में आपको फँसाया गया है, यह बहुत बुरी बात है, इसको वे कभी भी सच नहीं मान सकते वे आप के मीत (मित्र) हैं। मैंने कहा सूबेदार साहब अधिकारी किसी का मित्र नहीं होता, उसमें मित्रता को समझने की शक्ति नहीं होती मित्रता मानवता से समझी जाती है। जो उसके अधिकार के भय से उस से कोसों दूर रहती है। एक मुझको छोड़कर; सभी समझते थे कि बड़ा हाकिम मुझे पहुँचते ही छोड़ देगा।

हमारी गिरफ्तारी के पीछे बहुत बड़ी जालसाजी है यह सभी जान गये थे। किसने किया, इसमें लोगों की मुखतलिफ राय थीं। अधिकारी वर्ग ने एक अफवाह उड़ा दी कि बुद्ध-जयन्ती के सिलसिले में जब नेपाल के प्रधान-मंत्री आचार्य टंक प्रसाद आए थे, यह कह गए थे कि उचित अनुचित का विचार न करके शर्मा जी को बन्दी बनाया जाय, सब को विश्वास हो

सकता था क्योंकि उनके दौरे के बाद यह घटना घटी। मुझे विश्वास नहीं था, क्योंकि सत्तारूढ़ पार्टी के प्रमुख नेता सर्वश्री चन्द्रभूषण पाण्डे, दलबहादुर जी वकील, रामेश्वर पाण्डे सभी मुझे तौलिहवा के थाने में मिले तो उन्होंने कहा—शर्मा जी! आप निश्चिन्त रहें आपका केस न्याय-विभाग को भिजवाने का प्रबन्ध हम लोग कर रहे हैं धाँधली तो केवल शासन विभाग ही कर सकता है, न्याय विभाग को तो कानून की शरण लेनी ही पड़ेगी। नेपाल दण्ड विधान के विशेषज्ञ श्री दलबहादुर जी वकील ने अपनी सेवाएँ अर्पित की, प्रधान मंत्री के विषय में कही गई बात मुझे निराधार मालूम हुई।

मुझे लोगों ने आकर बताया कि यह सब जमींदार गया प्रसाद शाह को प्रसन्न करने के लिए जिलाधीश ने किया है। किसी किसी ने आकर यह भी बतलाया असिस्टैन्ट सुब्बा ने गया प्रसाद शाह की अवैधानिक कृतज्ञता स्वीकार करके ऐसा किया है। उन लड़कों से जब मैंने रास्ते में पूछा—कहो भाई तुम लोगों ने ये दो अपराध क्यों किए? इस प्रकार की चिट्ठी लिखने का दूसरे अनायास ही मुझे फँसाने का। मास्टर रामभरत मिश्र ने कहा—मैं अपराधी हूँ या नहीं यह तो केवल ईश्वर जानता है, उसके आँसू आ गए कहा—बयान में मैंने कोई बात अपनी मर्जी से नहीं कही है, उन्होंने यह भी बतलाया कि इस तरह सनसनी फैलाने वाली चिट्ठी किसने लिखी इसके वास्तविक लेखक का अबतक कोई पता नहीं। आपके दुश्मनों को मौका मिला उन्होंने आपको फँसाने में हम लोगों को अस्त्र बनाया अबतक जो बात मेरी समझ में आई वह यही है। किसी भी प्रकार राजी न होने पर जो दुर्व्यवहार उनके साथ किया गया जो यातनाएँ

उनको दी गई, उसको सुनकर मानवता रो पड़ी। अब मुझे परिस्थिति का ज्ञान बहुत ही आसानी से हो गया।

बगैर किसी सुविधा के मुझे छः रोज तक तौलिहवा थाने में ही रखा गया। सशस्त्र पुलिस और राष्ट्रीय सेना के संयुक्त पहरे का प्रबन्ध किया गया। बाद छः रोज के हमारा चालान शिवराज अमीनी बहादुरगंज को किया गया क्योंकि मुकदमा उसी के क्षेत्र का था। हमको फँसाने के लिए जो रूप मुकदमे को दिया गया था उसकी कारवाई बहुत ही गलत थी, रास्ते में सर्वश्री चन्द्रभूषण पाण्डे, भोलानाथ शर्मा, स्थानीय प्रधान पंच श्री रुक्कू खाँ साहब मिलने आए। साथ में वकील साहब श्री दलबहादुर जी भी थे। उन्होंने कहा—हमारा तो अपना विचार है, शायद ही न्याय-विभाग इसपर कारवाई करे। भाई हमारे घोड़ा लिए साथ ही चल रहे थे, किन्तु मुझे अधिकारियों ने सवारी करने की इजाजत नहीं दी।

शिवराज अमीनी के न्यायाधीश ने कारवाई करने से एक दम इन्कार कर दिया। साधारण चालान न्याय-विभाग को पुलिस लेकर जाती है, किन्तु हमारे चालान में एक प्रतिनिधि गोश्वारा (शासन विभाग) का पुलिस तथा सैनिक विभाग के हाथों आया था। गोश्वारे के प्रतिनिधि ने कहा—"क्या न्यायाधीश महोदय लिखित जबाब दे सकते हैं?" न्यायाधीश ने कहा—अवश्य और उन्होंने लिख दिया "अदालती बन्दोवस्त" (नेपाल दण्ड विधान) के अनुसार गोश्वारा द्वारा भेजे गए कागजों से कोई अपराध नहीं मिलता है केवल धमकी आतंक फैलाने की ही झलक है। सुरक्षा के लिए शासन विभाग कार्यवाही करे। न्यायाधीश ने बताया केवल मास्टर रामभरत तथा धर्मराज शुक्ल को नजरबन्द रखा जा सकता है, शर्मा जी को तो किसी कानून से नहीं रोका

जा सकता । उसी पाँव पुनः हम लोग जिले के हेडक्वार्टर तौलिहवा वापिस आए । पुनः अब प्रयत्न हुआ कि अपील कोर्ट ही कारवाई करे, उसने भी जबाब दिया, किसी भी भाव पर कानूनन शर्मा जी को रोका नहीं जा सकता । फिर ठा० गया प्रसाद शाह वादी को भी नैपाल के कानून के अन्तर्गत हिरासत में रखना चाहिए था किन्तु शासन विभाग द्वारा ऐसा नहीं किया गया । शिवराज अमीनी को रिपोर्ट की गई कि ठा० गया प्रसाद की दरख्वास्त के अनुसार डाका डालने का उद्योग किया गया है । अतः यह मुकदमा न्याय-विभाग को देखना चाहिए । अपील कोर्ट को थानेदार को मारने के विषय की चिट्ठी लिखने लिखाने का जुर्म बतलाया गया । इसी आशय का मुझको थुनुआ पुर्जी (जेल का टिकट) भी दिया गया । न्याय विभाग ने जिसे साधारण मुकदमा भी मानना स्वीकार नहीं किया, उस जुर्म में बिना जमानत मुझे जेल में रखा गया । यह कहकर कि गृह-विभाग को आगे की कार्यवाही के लिए लिखा गया है आदेश आने पर कार्यवाही होगी, अभी आपको सिर्फ जेल के हवालात में रखा जा रहा है ।

राणाओं के हुकुमी शासन में भी ऐसा अंधेर नहीं था क्योंकि राणा प्रधान-मंत्री सर्वाधिकार सम्पन्न होता था, सभी अधिकारी डरते थे, उनको भय रहता था कहीं कोई काठमाण्डू जाकर तीन सरकार से उजर न कर दे तो हमारा सर्वनाश ही हो जाय । गुण-दोष सभी में होते हैं, जैसा कि लोग बताते हैं इस माने में हुकुमी शासन तो अच्छा ही कहा जा सकता था । मैं जेल में पहुँचा, जेल में पहले ही खबर हो गई थी कि आज बहुत बड़े नेता आ रहे हैं, कैदी करीब करीब सभी खुश थे किन्तु जो अन्याय में पड़े थे वह तो बहुत ही खुश थे । समझते थे कि यह

जो अधिकारियों में स्वेच्छाचारिता, पक्षपात, रिश्वत-खोरी अदालतों में भ्रष्टाचार, धाँधली है उसकी जड़ नेता ही लोग हैं। शिक्षा के अभाव के कारण हुकुमी शासन के अवगुणों को तो समझ पाने की शक्ति नैपाल की जनता में है नहीं, किन्तु गुण हुकुमी शासन के ऐसे थे जो स्पष्ट थे। यही कारण है जनता राणाओं के शासन को अच्छा बताती, उसको खत्म करने के हम लोग दोषी थे। यदि इसका मनो-विश्लेषण किया जाय तो यह स्वाभाविक है भी। राणा मंत्री-मण्डल को समाप्त कर जब से लोक-प्रिय मंत्री-मण्डल की स्थापना नैपाल में हुई तब से मंत्री-मण्डल में रद्दोवदल इतनी हुई कि किसी मंत्रिमण्डल का इतने कम समय में कुछ भी कर पाना साध्य न था और न हुआ। राजनैतिक पार्टियों की बाढ़ आ गई राणा सरकार का स्थान पार्टी सरकार ने ले लिया। निरन्तर एक दूसरे के विरुद्ध घृणा प्रचार, सत्ता प्राप्त करने की होड़, पार्टी में अधिक से अधिक प्रभावशाली व्यक्ति के होने की लाग डांट के फलस्वरूप वही जालिम जमींदार, पंचमांगी प्रति-क्रिया-वादियों का दल विभिन्न पार्टियों में जा घुसा। राणाशासन काल में जो नैपाली कांग्रेस को लुटेरों का एक गिरोह बताते थे फिर भी राणाशासन का एक उच्चाधिकारी उनको मुँह तक नहीं लगता था, वही पार्टी सरकार के समय में अपने को नेता घोषित कर कुछ भी करवा लेने में समर्थ हुए। इसका प्रभाव जनता पर बहुत बुरा पड़ा, उसको क्या पता कि प्रजातंत्र में सबको समानाधिकार है, जनता तो यह कहती—हाय राम, जेई छिनरा तेई डोला के साथ।

उनकी क्या गलती परिवर्तन तो अच्छे के लिए होना चाहिए। राणा सरकार तथा वर्तमान सरकार का तुलानात्मक अध्ययन जब जनता करती तो अधिकारियों का अन्याय अत्याचार

रिश्वत-खोरी, कुनबा-परवरी, पक्षपात राणा शासन काल से भी अधिक मात्रा में उसे मिलता। क्यों ? इसका उत्तर वह अपने आप नहीं पा सकती, उसमें इतना विवेक नहीं कि वह यह समझे कि किस मजबूरी में पार्टी सरकार पुराने सरकारी यंत्र को समाप्त नहीं कर रही है। उनका तो कहना है बदल देना चाहिए नहीं बदलती यह पार्टी सरकार की "धिंगाटी" है। यह सब सोचकर शायद, एक कैदी ने पहले मुझे नमस्कार किया इसके बाद कहा दोहाई, धींग धींगा—सरकार की यही तरह, कुलिनतेन का भेजौ तौ ही समझी की सरकार कै धिगाही एक आँखि से होत है।

५—धर्म की आड़ में

धन, दूध, पूत, लक्ष्मी, भगवान ने सब कुछ दे रखा है उस जन्म में किया था, इस जन्म में पाया। बहुत बड़ी तपस्या होती है तभी तो ये नियामतें मिलती है। कितने बड़े भाग्य हैं उसके जिसके घर का डोला, शाही खान्दान में पहुँचे। साधारण लोगों की तो बात ही क्या जिससे बड़े बड़े सरकारी अधिकारी भी डरते हैं। क्यों न हो, उसके पास तांबा पत्र है, डोले के बदले मिले हुए अनेको गांव के वित्ती (जागीर) का उसे जमींदार कहना भूल है, वह तो राजा है राजा, जमींदार को तो भूमि कर देना पड़ता है।

उस जन्म में किया था, पाया। इस जन्म में भी तो ब्रह्म मुहूर्त में उठता है, नित्य क्रिया से निवृत्त हो १० बजे तक पूजा ही करता रहता है, गऊ ब्राह्मण का रक्षक "धर्म किए धन ना घटे" का मानने वाला, गरीबों का माई-बाप। अवश्य ही भगवान की उस पर कृपा है। उस जन्म में किया था इस जन्म में पाया, इस जन्म में कर रहा है उस जन्म में भी पाएगा। इन्साफ भी खूब करता है "दूध का दूध पानी का पानी"। असल क्षत्री है क्षात्र-धर्म को निभाने वाला। मलमास भर गांव के ब्राह्मण भोजन पाते हैं। एक धोती अँगोछा दक्षिणा अलग से, इसके बदले में केवल उनको गाँव के पूर्व शिवालय में जिसकी स्थापना उसने स्वयं की है १० बजे तक पार्थिव पूजन ही तो

करना पड़ता है। कितना पुण्य वह संचय कर रहा है? इस प्रकार की बातें सुनते सुनते हमारा बाल-हृदय भी उससे श्रद्धा करता था।

हमारे बड़े चाचा स्वर्गीय पंडित जगदत्त उपाध्याय बित्तादार साहब के बचपन में जब उनके धन जयदाद का कोई देख रेख करने वाला नहीं था तो वे ही उनके यहाँ के सर्वेसर्वा एवम् उनके अभिभावक थे। वे उनको अपने लड़के की तरह मानते, बित्तादार साहब भी उनको अपना बुजुर्ग समझते। हमारा परिवार भी सम्पन्न था, हमारे पूज्य पिता जी स्वर्गीय हरदत्त उपाध्याय नैपाली भाषा और कानून के विशेषज्ञ थे, पूज्य बड़े चाचा बित्तादार साहब के यहाँ के सर्वेसर्वा, कुल मिल मिलाकर हमारे खानदान का भी गाँव जवार में काफी दब-दबा था, पचीस तीस हल की खेती तीन तीन गाँवों में, किसी बात की कमी नहीं थी। फिर भी थे पुराने ख्यालात के ब्राह्मण जो अपने को सदैव भिक्षुक ही कहता था। हाँ! पिता जी हमारे अवश्य कुछ स्वाभिमानी थे बुद्धिवादी होने कारण। बड़े चाचा गाँव के बित्तादार के साथ दिन बिताते, पिता जी सरकारी कचहरी में। हमारे बड़े चाचा मुझे अधिक प्यार करते थे यही वजह है कि मैं अक्सर उनके साथ ही रहता।

दस बजे बित्तादार साहब की भी कचहरी लगती, जब वे पूजन तथा गीता के अट्ठारहों अध्याय का पाठ करके छुट्टी पाते। हुक्म होता, मामले पेश किए जाते। कोई कहता—दोहाई सरकार अमुक व्यक्ति ने हमारी बहू को देखकर भद्दे गाने गाए हैं, कोई कहता—गरीब-परवर–अमुक–व्यक्ति ने सरकार के कहार को जौरा देने से इन्कार किया, कहता है काम उनका करे मजदूरी मैं क्यों दूँ? एक ने आकर कहा—धर्मावतार अमुक व्यक्ति से

बेगार के लिए कहा गया कल रात ही को, अबतक काम करने नहीं आया, कहता है अभी हम ही पिछड़े हैं बेगार कैसे करें।

एक दूसरे ने आकर कहा—सरकार के हुक्म के मुताबिक एक हाथी दो घोड़े खरीदने के लिए जो चन्दा असामियों पर लगाया गया था सोनपुर मेले के १५ दिन पहले ही जमा होना चाहिये था। अमुक-अमुक व्यक्ति ने अब तक नहीं जमा किया। तीसरे ने एक आदमी को सामने खड़ा करके कहा—हुजूर इस ने सरकारी सिपाही का हाथ पकड़ा है।

हुक्म हुआ सभी को हाज़िर करो सिलसिले से बारी-बारी से सबकी पेशी हुई।

वित्तादार साहब ने त्यौरी बदल कर कहा—क्यों साले पापी तुमने उसकी बहु को देखकर क्यों भद्दे गाने गाए? झुकादो साले को, रख दो पीठ पर पाँच ईंटे। हुक्म फौरन तामील किया गया, दाँत पीसकर वित्तादार साहब ने कहा—हमारे यहाँ ऐसा अँधेर थोड़े ही चलेगा! ऐसे आदमियों को मार डालने में भी पाप नहीं लगता, क्यों केशव पंडित?

सच कह रहे हैं सरकार, धर्मशास्त्र ने बताया है कि दूसरे की स्त्री को माता के समान जानना चाहिए, सरकार स्वयं धर्मज्ञ हैं, सब कुछ जानते हैं, इसमें शंका की क्या बात है, विधर्मियों को तो राजाओं ने प्राण दण्ड दिया ही है। फिर भी सरकार की प्रजा है, सौ पचास रुपया जुर्माना करके क्षमा कर दीजिये। झुके हुए व्यक्ति के पास जाकर पं० जी ने कहा जाओ सौ पचास देकर छुट्टी लो। उसने कहा—'पंडित जी मेरे पास एक पैसा भी नहीं है, इसने मेरे ऊपर झूठा इल्जाम लगाया है। पंडित जी ने कान मूँद लिए,कहा—हरे राम,हरे राम, वह तो सरकार का बहुत बड़ा खैरख्वाह है, भला यह सरकार को विश्वास होगा कि वह झूठ बोलेगा। ऐसी बात जबान पर मत लाना।

सरकार ने कहा—पंडित क्या बात है ? क्रोध तो इसके ऊपर मुझे बहुत था, किन्तु आपने कह दिया तो उसे १०० रुपया जुर्माना करके छोड़े देता हूँ।

ओह, तुम कह रहे हो कहार काम हमारा करता है-मज़दूरी मैं क्यों दूँ ? तुम मत दो, लेकिन देखो आज से तुम गाँव के कुए में पानी नहीं भर सकते, नाई, धोबी, बढ़ई, लोहार, अहीर सब बन्द, कोई तुम्हारा काम नहीं करेगा। गाँव हमारा है, सब आदमी हमारे हैं। जानवर भी तुम हमारे गाँव में नहीं चरा सकते, यही तुम्हारी सजा है। अपने कारिन्दा से कहा—"सुन रहे हो भैय्या जुगल किशोर !"

जुगल किशोर ने कहा—'आपके हुक्म की तामील की गई करीब चार रोज़ हुए ! यह तो सिर्फ सरकार को दिखाने के लिए कि इलाके में ऐसे बदमाश असामी भी है सरकार के हुजूर में हाजिर किया है। यह तो हम लोगों को मालूम ही है कि ऐसे लोगों के लिए क्या सजा निश्चित की गई है।

असामी—दया निधान चार रोज हो गए गाय बैल धारी में बन्द चारा-पानी के बिना तड़प रहें हैं।

जमींदार साहब ने हँसकर कहा—पंडित जी, यह कितना पापी है जो एक मन धान के लिए गायों बैलों को पानी चारा बिना मारे डाल रहा है।

पंडित ने कहा—क्या कहें सरकार, पाप तो दुनिया में इतना अधिक हो गया है कि इतने पर ही भगवान को अपने वायदे के अनुसार जन्म ले लेना चाहिये,लेकिन क्या कहें सरकार ? पंडित जी ने असामी से कहा अरे भाई जो एक मन तू मुझे खलिहानी देता है चाहे मत देना लेकिन जा गौ हत्या से तो बच।

एक सिपाही ने एक आदमी को सामने करते हुए कहा—यही है सरकार,कहता है अभी मैं ही पिछड़ा हूँ, बेगार कैसे दूँ ?

वित्तादार साहब की आँखें लाल हो गईं, उनका इतना कहना ही था, "मारो साले को" मारते मारते सिपाहियों ने बेदम कर दिया। कहा—इधर ले आवो पाजी को, और बोले अगर पिछड़े ही थे तो तुम कहते मैं सीर से तुम्हारी मदद करवा देता,यह कहते हुए एक व्यक्ति की तरफ मुखातिब होकर बोले 'क्यों सुकुल ! बुरा कहता हूँ ?'

जानने को तो शुक्ल जी भी जानते थे, जो बेगार से छुट्टी नहीं देता है वह मदद क्या करेगा ? किन्तु कहते कैसे आखिर सुकुल इसीलिए तो सुकुल थे। नहीं तो उनकी बिसात ही क्या थी, जैसे सभी असामी वैसे ही वह भी। बोले सरकार बे-समझ है नहीं जानता, बेगार तो इसका नाम किसी बेवकूफ ने रख दिया है, नहीं तो यह एक मदद है। जिसके बलपर हमारा सारा काम चले, अगर हम इतनी भी सेवा सरकार की न करें तो हमें धिक्कार है।

इन्साफ हुआ—इससे एक रोज के बजाय तीन रोज काम लो। सुबह पकड़ कर लावो शाम को छुट्टी दो।

वित्तादार साहब को वे नहीं भूले थे जिन्होंने हाथी घोड़े का चन्दा नहीं जमा किया था। हुक्म हुआ कौन कौन है लावो मेरे सामने।

हाथ बाँधकर तीन चार आदमी खड़े हुए। उनकी वही दशा थी जैसे कसाई के सामने गाय। बिना पूँछे ही एक ने कहा—सरकार थोड़ी पैदावार, माँ मर गई थी, उसके क्रिया-कर्म में खर्च हो गया इस समय बड़ी तंगी है। दूसरे ने कहा—सरकार जो कुछ था इसी साल बेचकर हुजूर का ही कर्ज था, दे दिया।

तीन साल हुए सौ रुपया सरकार ने जुर्माना किया था मुझ पर, दे नहीं पाया था। इस साल बेच बाच कर उऋण हो गया हूँ। बहुत बुरे दिन कट रहे हैं सरकार। तीसरे ने कहा—दया निधान माफी मिले, हमारी हालत सबको मालूम है खेती कम परिवार अधिक। मजदूरी का ही सहारा है उपवास करते करते मरे जा रहे हैं।

एक सिपाही ने हाथ बाँध कर कहा सरकार सब झूठे हैं साले। यह कहता है इसकी माँ मर गई, माँ मर गई तो क्या इसका घर उठा ले गई है। हमारी आँख में धूल झोंक रहा है, अभी आठ रोज बीते होंगे इसने खड़े फूल की थाली खरीदी है। और वह जो कह रहा है कर्ज अदा किया है सब बेच-बाच कर, कितना झूठ बोलता है। एक बधिया इसके पास है जिसका इसको पच्चीस रुपया मिल रहा है। सरकार को तो इसे केवल दस ही रुपया देना है। सरकार को ताज्जुब होगा इसकी झुठाई पर जो कहता है उपवास करते करते बच्चे मरे जा रहे हैं, लड़का इसका चाँदी का गुजहाँ (कड़ा) हाथ में पहिने है, क्या वह दस रुपये का भी नहीं होगा ?

उलाहने के स्वर में सिपाही ने झुककर कहा—सरकार ही तो माई-बाप हैं, सिर हाजिर है चाहे धड़ से उड़ा दें उज्र नहीं होगा। मगर यह कहे बिना हम नहीं रह सकते कि सरकार दया करते रहते हैं, जिसका नतीजा यह होता है कि ये बदमाश सिर पर चढ़े रहते हैं। एक आदमी की तरफ इशारा करके कहा—ऐसा ही न होता तो क्या इसकी यह मजाल थी कि यह सरकारी सिपाही धौंताल का हाथ पकड़ लेता, वह भी तीन कतल छः डकैतियों में हिदुस्तान से फरार होकर आया है, इसको तो वह कच्चा ही खा जाता। लेकिन क्या कहे जब सरकार.....

वित्तादार साहब को उसकी गुस्ताखी खल गई, इसकी यह मजाल, सरकारी सिपाही का यह हाथ पकड़े। हुक्म हुआ पीटो साले को। बेशुमार लात जूते लगे पड़ने, उसका चीखना सुन कर चंदा न देने के अपराध में लाए गए तीनों के पैर के नीचे की जमीन खिसकने लगी, कलेजा दहल गया। एक साथ हाथ बाँध कर बोले—दोहाई सरकार की एक रोज की मोहलत, कल अदा कर देंगे। तीनों ने अपने सिर जमीन पर टेक दिये। सरकार कुछ न बोले। कारिन्दा ने कहा—जाओ कल दस बजे तक अदा न हुआ तो चमड़ी उधेड़ ली जायगी।

चिनकू बड़घर उसी गाँव के आए हुए थे, उनसे मालूम हुआ सिपाही के हाथ पकड़ने की वजह यह थी कि उसने दशहरे को घी दरबार में नहीं भेजा था। सिपाही ने कारण पूछा—उसने कहा मालिक राम लीला का मेला देखने के लिए लड़की जिद करने लगी, उसकी धोती बहुत बुरी तरह से फटी थी, क्या कहे मालिक जबान लड़की देखकर शर्म से गड़ जाता था। उसने कहा—"मैं घर पर था भी नहीं, घी रखा था, गाँव में बनिया आया, घरवाली ने उसे बेच दिया और लड़की को धोती खरीद दी। सोचा था तैयार हो जायगा, नहीं हो सका।" यह बातें तो उसने कही थी कि उसकी गरीबी पर सिपाही को दया आए, लेकिन उसने कहा—बस सिर्फ इसीलिए तुमने दरबार को घी नहीं भेजा। मेरे—पास क्यों नहीं भेज दिया, एक धोती के बजाय दो खरीद देता।

उसका पितृहृदय अपनी पुत्री के लिए ऐसे अपमान जनक शब्द सुन विकल हो उठा—बोला सिपाही साहब जबान संभाल कर बोलो—हम गरीब हैं तो क्या हमारी इज्जत नहीं। आपके भी तो बहन बेटी होगी, अपनी इज्जत की तरह दूसरे की नहीं

समझते। सिपाही बिगड़ पड़ा, लगा तड़ा-तड़ उड़ाने दस बीस हाथ जब उस पर पड़ चुके तो उसने बचाव के लिये ही हाथ पकड़ा था। मार पीटकर जब वह लाकर विर्त्तादार साहब के सामने खड़ा किया गया तो वह चिनकू बड़घर की ओर देख रहा था मानो कह रहा हो, आपको तो हमारी गलती मालूम है। बड़घर ने उसकी तरफ ताक कर सिर झुका लिया, जैसे कह रहे हों मुझे मालूम होकर ही क्या होगा ?

६—बदला

"बाबा"

क्या है बिटिया एक बूढ़े ने खाँसते हुए कहा।

कंडे बीन लाऊँ बाबा, लड़कियाँ सब जा रही हैं।

चली जाव बिटिया।

एक लोटा पानी सिरहाने रख दिया, चिलम भरकर बुड्ढे के हाथ में थमा कर पियरिया ने टोकरी उठा ली और चली गई। बाँए हाथ और कमर के बीच में टोकरी को लिए अन्य गाँव की लड़कियों का साथ लेने के लिए पियरिया चली जा रही थी, हौले-हौले।

गाँव के जमींदार का लड़का उसका नाम तो किसी को मालूम नहीं, चिकन भैया के ही नाम से लोग उसे पुकारते। वह हाथ में गुलेल लिए सामने से आ रहा था पियरिया को देखकर बोला—क्यों री पियरिया, शिवटहल काका कहाँ हैं! दिखाई नहीं पड़ रहे हैं, कई रोज हुए।

पियरिया के मैले कुचैले कपड़ों के भीतर से उसकी जवानी बादलों में छुपे चाँद की तरह झाँक रही थी। बहुत सुन्दर थी, केवल इतना ही उसके सौन्दर्य वर्णन के लिए पर्याप्त नहीं। उसकी सुन्दरता को देखकर गाँव के जमींदार की लड़कियों को ईर्षा होती, गाँव की औरतें तो बहुत दिन से यही कहती चली आ रही हैं, भला इसको हम गरीबों के यहाँ जन्म लेना चाहिए था?

पियरिया ने सिर नीचे ही किए हुए कहा--मालिक, बाबा तो कई दिन से बीमार हैं।

सहानुभूति प्रकट करते हुए चिक्कन ने कहा—पिता जी कहते थे कि शिवटहल काका हमारे यहाँ के बहुत बड़े खैरख्वाह और विश्वास-पात्र आदमी थे, उन्होंने हम लोगों की बहुत बड़ी सेवा की है। तुम घर पर क्यों नहीं आईं, मैं दवा दे देता।

पियरिया ने कहा—मैंने यह बात उनसे कही थी कि दवा लादूँ, बोले अब जीकर क्या होगा, क्या काम है, बस यही एक साध बाकी है कि तुम्हारा.....। इतना कहकर वह शर्मा सी गई उसका रुक पाना मुश्किल हो गया, कहा—भैया जा रही हूँ कंडा बीनने, देर होगी।

वह चली गई, चिक्कन को लगा जैसे स्वप्न देखते देखते उस की आँख खुल गई हो। घर की ओर चला, यही सोचते हुए यह कैसे हाथ लगे। सोचा कहार को कहे पटाए, कि गाँव की नाइन की मदद लूँ! तय किया, सबसे आसान तरीका यही है कि नाइन को हाथ में लिया जाय फिर समझो चिड़िया फंसी। रास्ते ही में नाई का घर पड़ता था चले उसी तरफ, घर पर पहुँचे। पीली धोती के गुलाबी रंग से रंगे हुए आँचल को फरकाती हुई नाइन आई, बैठने के लिए मंचिया रखकर कहा—हमारे पास क्या है जिससे मालिक की सेवा करूँ।

चिक्कन ने कहा--नाइन भौजी सबसे बढ़कर सेवा की वस्तु तो तुम्ही हो।

नाइन ने मुस्कराते हुए कहा--यह शरीर ही आपका है। हाजिर है अगर इसके लायक कोई काम हो। चिक्कन ने हँसकर कहा—यहीं? नाइन समझ गई, नाइनों की चंचलता मशहूर होती है, चली इठलाती बलखाती हुई आगे-आगे, पीछे चिक्कन। आधा घण्टे बाद चिक्कन ने नाइन के घर से निकलते हुए कुछ

लापरवाही दिखाकर कहा—देखना शिवटहल बुढ़ऊ बीमार है, उनके यहाँ जाकर दवा के लिये किसी को भेज देना। नाइन को मिनटों में इस बात का ज्ञान हो गया, यह चिक्कन की आसक्ति क्यों है ? गाँव के माली की लड़की धुपवा को जमींदार अर्थात् चिक्कन के पिता के कमरे में दस बजे रात के बाद पहुँचाना, जमींदार की चौबीस वर्षीय पुत्री यानी चिक्कन की बहन के पास रामू पंडित के लड़के को पिछवाड़े का दरवाजा खोलकर पहुँचाना, यह सब उसी का तो काम था ?

इसी तरह से तो चिक्कन के पिता ने भी मोहब्बत का इजहार करते हुए गले से लिपट कर कहा था। नाइन दुलहिन, दिल तो यही कहता है, तुम्हें छोड़कर एक मिनट भी न जाय। आखिर जब धुपवा से मिला दिया तो अब बचते हैं कहीं एकी-एका मुलाकात न हो जाय ? इन धनवानों की बात का क्या ठिकाना ? नाइन ने समझ लिया कि इस सबकी तह में है शिवटहल की नतिनी पियरिया।

चिक्कन की हमदर्दी को सोचकर पियरिया ने मन ही मन कहा—जैसा नाम चिक्कन है, वैसे ही चिक्कन भैया चिक्कन ही है। नहीं तो न मालूम कितने बीमार होते हैं, मरते हैं, गरीबों को कौन पूँछता है। इन्हीं विचारों में पियरिया खो गई, जितने भी गोबर सामने आए टोकरी में रखती गई। सूखे गीले का ध्यान ही उसको नहीं रहा, यही वजह है कि जल्दी ही उसकी टोकरी भर गई। सिर पर रखकर घर पहुँची।

टोकरी को उतार कर आई तो देखा शिवटहल बेहोशी में कह रहे हैं, महामारी में भगवती जी स्वयं होती हैं। क्या यही हैं उनके विचार; बुढ़िया, पतोहू, पूत सबको उठा ले गई फिर मुझे ही क्यों छोड़ दिया। पियरिया के लिए, पियरिया के लिए तो

उसके बाप को छोड़ सकती थी। मैं क्या कर सकता हूँ पियरिया के लिए, इन्द्रियाँ शिथिल पड़ चुकीं, खाने खिलाने भर की तो ताकत नहीं है, एक लम्बी साँस लेकर मुँह से आवाज निकली, ओह !

गांव में तीन साल हुए भीषण महामारी का प्रकोप हुआ था, जिस में घर के घर बर्बाद हो गए थे। नैपाल राज्य में महामारी एक बार जब पड़ जाती है, तो उसका नियंत्रण बहुत ही मुश्किल होता है। सरकार का अपना कोई स्वास्थ्य-विभाग तो है नहीं कहीं एक आध अस्पताल है भी, तो वे दवाइयाँ अस्पताल पहुँचने के पूर्व ही बिक जातीं हैं। झाड़ फूँक, देवी की विनती, पूजा पाठ का ही सहारा होता है। बहुत कुछ किया शिवटहल ने फिर भी पूत, पतोह, बुढ़िया को चलते-चलते देवी जी लेती गईं। यही आज बेहोशी में वह बड़बड़ा रहा था।

पियरिया ने अपने बाबा के सिर पर हाथ रखा तो वह बुरी तरह जल रहा था, वह घबड़ा गई वह कुछ सोच ही नहीं पा रही थी कि क्या करे ? घर के बाहर निरुद्देश्य निकली देखा सामने नाइन चली आ रही है। डूबते को तिनके का सहारा ही काफी है, नाइन से लिपट कर लगी फफक फफक कर रोने, कहा—काकी बताओ क्या करें, बाबा की हालत बहुत खराब है। सिर पर हाथ फेरते हुएकहा—बिटिया धीरज धरो, चली जाव बखरी से कुछ दवा ले आवो, भगवान चाहेंगे तो अच्छे हो जायेगें, चिक्कन भैया बड़ी अच्छी दवा देते हैं।

अस्त व्यस्त, भीगी आँखें बतला रहीं थीं कि जैसे अभी अभी रोकर आई हो, जमींदार के दरबार पर पहुँच पियरिया सीधे बखरी के जनान-खाने पहुँच गई, और एक किनारे खड़ी हो गई। देखा जमींदार की पतोहू ने साबुन से मुँह धोकर क्रीम

पाउडर एक साथ फेंट कर लगाया फिर मखमली रूमाल से हल्के हाथों से मुँह को पोंछा, गालों पर पाउडर, होठों पर लिपिस्टिक लगाकर, आँखों में काजल लगाया भौंहों को भी काली की। तोड़ मरोड़ कर बालों को बनाया। बहुत ही सुन्दर ढंग से कढ़ाई किए गए पेटी कोट पर बाम्बे प्रिन्ट इन्द्र धनुष रंगी साड़ी, मैच करता हुआ ब्लाउज, जिसके नीचे प्लास्टिक की चोली की चित्रकारी स्पष्ट दिखाई पड़ रही थी। कीमती चप्पल के ऊपर पायल। कानों में टाप्स, गले में लाकेट, अँगुलियों में कीमती अँगूठिया, हाथ में कँगन। यह देखकर पियरिया मंत्र मुग्ध सी हो गई। वह सोच भी नहींसकती थी कि सौन्दर्य के इतने साधन-प्रसाधन भी हो सकते हैं। गाँव की भोली भाली लड़कियों को फोड़ने में बड़े आदमियों की स्त्रियाँ दूती का काम करती है, मुँह से भले ही कुछ न कहें किन्तु गहनों, कपड़ों, सौंदर्य प्रसाधनों का प्रदर्शन करके वे लुभाती हैं जो उनके पतियों और भ्राताओं को गाँव की सीधी साधी लड़कियों के फँसाने में सहायक होता है। इस तरह गरीबों की इज्जत का भी धनवानों द्वारा भयंकर शोषण होता है।

चिक्कन ने आकर कहा—चलो जल्दी ही लौट आना है। देखा ! पियरिया भी रुआँसी खड़ी है, पूछा क्या बात है, उसने साहस करके कहा—बाबा की तबियत बहुत खराब है, कुछ दवा दे दीजिये। मौका कुछ न मिला चिक्कन ने बुला तो लिया किन्तु अब वह सोच ही नहीं पा रहा था कि वह क्या दवा दे, उस पर जल्दी इस कदर। उसे एक बात याद आ गई, लैमजूस-मिठाई उसने मुट्ठी-भर देते हुये कहा एक एक घण्टे बाद देना, खत्म हो जाय तो फिर आना। पियरिया चली गई वह भी अपने घर वालों को लेकर देवी जी के दर्शन को चल दिया। रास्ते भर वह देवी

जी को धन्यवाद देता रहा, उन्हीं की कृपा से तो उसे इतनी जल्दी दवा सूझ गई थी।

पियरिया घर पर पहुँची तो शिवटहल की जूड़ी उतर गई थी, ताप चढ़ा था,उसने मुंह में चिक्कन की दवा की टिकिया डाल दी। उठाकर बैठाया पानी का लोटा मुँह में लगाकर कहा बाबा पानी पी लो। शिवटहल पानी के साथ टिकिया निगल गये।

यों तो जब से शिवटहल बीमार पड़े तभी से पियरिया के खाने पीने का कुछ ठीक नहीं रहता था। किन्तु इधर पूरे पाँच वक्त से वह बहुत खाई तो एक मुट्ठी कच्चा चावल एक डली नमक। बाबा को शान्त देख पियरिया को शान्ती मिली। उसने भूख का भी पूरा अनुभव किया। आज उसने कुछ पकाकर खाने का निश्चय किया घर में गई चावल निकालने। उसे आँसू आ गये यह देखकर कि दरवाजा न बन्द होने के कारण कुत्ते ने चावल का घड़ा गिरा दिया था, चावल कुत्ते के खाने से जो बचे बिखरे पड़े थे पियरिया को अपनी चिन्ता नहीं थी चिन्ता तो थी बाबा की, बुखार उतरने पर वह उन्हें पथ्य क्या देगी ? और तो कुछ घर में है नहीं, सोचकर पियरिया के रोते रोते आँचल भीग गये। अब क्या करे, क्या न करे इसी उधेड़ बुन में पियरिया लीन थी। बाहर से आवाज आई पियरिया! आवाज चिक्कन की थी बोली—आवो मालिक। चिक्कन घर के अन्दर पहुँचा देखा पियरिया की आँखें भीगी हैं, बोला पागल हुई है, क्यों रोती है ? एक दवा दी है, दूसरी दवा के लिए बढ़नी बाजार आदमी भेजा है। चिक्कन व्यग्र हो रहा था पियरिया को स्पर्श करने के लिये, वह मौका ठीक समझ कर अपने हाथों उसके आँसू पोछने लगा बिखरे चावल और टूटे मिट्टी के घड़े को देखकर चिक्कन ने कहा—इसकी चिन्ता न करो और दस रुपया हाथ पर रख दिया।

मनोवैज्ञानिकों ने यह बतलाया है कि जो पुरुष स्त्रियों के संसर्ग से या जो स्त्री पुरुषों के संसर्ग से जितना अधिक बचना चाहती है उतनी ही अधिक कामोत्तेजना उसको क्षणिक स्पर्श मात्र से ही हो जाती है। आज तक किसी भी पुरुष शरीर ने पियरिया का अंग स्पर्श नहीं किया था, घर में भी तो कोई नहीं था एक बुड्ढे को छोड़कर। पियरिया के बदन में जैसे बिजली दौड़ गई, उसको इस कारण का कुछ पता नहीं, उसके शरीर में एक कँपकँपी सी हुई वह उठकर अलग खड़ी हो गई।

बड़ी सुन्दर है तू पियरिया, चिक्कन ने कहा।

नारी सुलभ लज्जा से उसका मुंह लाल हो गया, अब उसकी सुन्दरता और दूनी हो गई। नारी का आभूषण उसकी लज्जा है। पियरिया को आज मालूम हुआ वह सुन्दरी है।

पहले-पहल ही इससे आगे बढ़ना शायद मुनासिब न समझ कर चिक्कन यह कहता हुआ "बनिये के यहाँ से सामान खरीदकर खाना पकाना, उपवास न करना वह चला गया।"

चिक्कन के चले जाने के बाद पियरिया ने रुपयों की तरफ देखा, इतनी बड़ी रकम तो उसने आज तक देखी भी नहीं थी। चिक्कन की सहृदयता को सोचकर लगी उसे मन ही मन धन्यवाद देने। याद आया, कह गये हैं उपवास न करना, बढ़ी कण्डे की तरफ सोचा चूल्हा जला जाऊँ बनिये के यहाँ से चावल लाकर पका लूँ। हाथ लगाया तो क्या देखती है कि वह तो कंडे की बजाय गोबर उठा लाई है, कुछ सूखे जो थे वे भी गोबर के साथ गीले हो गये थे। पियरिया को अपने ऊपर बड़ा आश्चर्य हुआ सोचा मुझे क्या हो गया है? वह हमेशा सबसे अच्छे कंडे लाती थी। चाह कर भी पियरिया चिक्कन के आदेश का पालन न कर सकी। रात को सोई तो सारी रात उसके कान में यही ध्वनि जगूँती रही, बड़ी सुन्दर है तू पियरिया!

आज शिवटहल का जी कुछ हल्का था। उन्हें दातून पानी देकर चली पियरिया बगिया की ओर। वह लकड़ियाँ चुन-चुनकर बोझ बाँध रही थी, पीछे से चिक्कन ने आकर आँखें मूँद ली। पियरिया के सारे बदन में एक ऐसी सिहरन सी महसूस हुई जिसका उसे कुछ भी अनुभव नहीं था। आज उसे यह स्पर्श मधुर मालूम हो रहा था इसीलिये पहचानकर भी वह बता नहीं रही थी, कौन है ?

चिक्कन ने पियरिया की तरफ मुंह बढ़ाया.....

फिर दिल काँप गया दोनों हाथ अलग हो गये पियरिया ने कहा--

"मालिक आप।"

"हाँ पियरिया मैं।"

"कहाँ आये थे मालिक ?"

"तुम्हारी मुहब्बत हमें खींच लाई पियरिया।"

"मुहब्बत !"

"हाँ मुहब्बत ! मैं तुम्हें प्यार करता हूँ।"

किसी के पैर की आहट पाकर चिक्कन चौंका। चमकी को देखकर उसके होश उड़ गये, दबे पाँव वह वहाँ से चलता बना।

पियरिया को देखकर चमकी बड़ी जोर से हँसी, ठहाका मार कर, उसकी हँसी में भयानकता थी। बोली—"हाँ ! मुहब्बत मैं तुम्हें प्यार करता हूँ" इन्होंने यही मुझसे भी तो कहा था। कहते थे, "चमकी मैं तुम्हारे प्रेम में पागल हो रहा हूँ। मुझे न तड़पाओ, न जलाओ।" चमकी आकर पियरिया से लिपट गई उसे अपने आलिङ्गन पाश में बाँधकर उसे चूमते हुए कहा—जब

तक चाँद-सूर्य कायम है हम दोनों को कोई अलग नहीं कर सकता। पियरिया का कंधा चमकी के आँसू से तर हो रहा था चमकी ने कहा—गहने,कपड़े के लोभ तथा इसकी कपट भरी मीठी बातों ने मेरा स्त्रीत्व लूटा। दुनिया ने मुझे व्यभिचारिणी कहा—इसी शर्म से तो मेरे पिता ने आत्म-हत्या कर ली। अपनी ही सन्तान को दुनिया में आने के पहले उसने खत्म कर दिया। और पापी फिर भी तुमको दुनिया ने माँफ कर दिया! क्या इसीलिये कि तुम अपने जाल में फाँसकर भोली-भाली लड़कियों की जिन्दगी तबाह करते रहो। चमकी ने दाँत पीसते हुए कहा—ऐसा तुम नहीं कर सकते, नहीं कर सकते।

गाँव का बच्चा-बच्चा जानता है कि चिक्कन ने ही चमकी का जीवन नष्ट किया किन्तु किसकी हिम्मत जो जबान पर लाये उलटे सभी उसी का तिरस्कार करते वह गाँव में अकेली एक झोंपड़ी में पड़ी रहती, कोई देता तो खा लेती नहीं तो राम है। पियरिया चमकी की विक्षिप्तता को देखकर घबरा गई। उससे अपने को छुड़ाते हुये पियरिया ने कहा—तुमको क्या हो गया है? चमकी ने घूर कर देखा, उसकी आँखों से जैसे लपट निकल रही थी, उसने पियरिया की बाँह पकड़ कर झटका और कहा चलो मेरे साथ। पियरिया को जैसे संमोहन हो गया वह कुछ न बोली, चल पड़ी। चमकी नेपियरिया के घर पहुँचकर शिवटहल को देखा, चारपाई पर दीवार के सहारे बैठे हैं। चमकी ने शिवटहल के पैर पकड़ कर कहा—काका हम गरीबों का जहाँ रहें वहीं घर, यहाँ हमारा क्या है, भाग चलो काका भाग चलो, अभी कुछ नहीं

बिगड़ा है, सर्वनाश से बचने के लिये यहाँ एक मिनट भी रुकना ठीक नहीं है। मुझको देखो काका, मुझको देखो।

शिवटहल ने कहा—बेटी मैं सब समझ गया। बुड्ढा पुराना दरबारदार था, दवा के नाम पर लैमनजूस मिठाई देखकर उसी वक्त संदेह हो गया था। किन्तु क्या करता, बीमारी से वह असहाय था। बेटी! दम नहीं लग रहा है, कुछ पेट में अच पड़ जाता तो ठीक था। पियरिया ने दिखाते हुए कहा—मेरे पास यह रुपये हैं यह भी बतलाया कि उसको कल किक्कन दे गया था, बाबा की बीमारी में सहायता के लिये। चमकी चीख पड़ी बोली—धर्म को हम गरीब ही तो मानते हैं, ये धनिक क्या जाने धर्म को। हमारे हिन्दू धर्म के अनुसार ऐसे पापियों का पैसा खाना पाप है। चमकी ने गाँठ से कुछ पैसे खोलकर दिये और बनिये के यहाँ से चावल ला बनाने को कहकर चली गई। थोड़ी देर बाद वापस आकर बोली—वापस कर आई उस नीच के पैसे?

जब पशु पक्षी तक अपने-अपने बसेरे को वापस हो रहे थे, तीन प्राणी अपना बसेरा छोड़कर चल दिये। पियरिया की समझ में बातें आ चुकी थीं वह जान रही थी कि यह मेरे जीवन को बचाने के लिये ही हो रहा है। चमकी, जिसे दुनिया आवारा कहती थी उसने उसका जीवन बचाया। शिवटहल ने चमकी से कहा—कहाँ चलोगी बिटिया। काका! ऐसी जगह चलना है जहाँ मजदूरी मेहनत तो कर सकें।

शिवटहल ने कहा—तो चलो बिटिया तुलसीपुर चलें वहाँ धर्मशाले में रहने की जगह भी मिल जायगी।

दूसरे दिन ८ बजे शाम को तीनों बिहारी साहु की धर्मशाला में पहुँच कर अँधेरे में ही एक किनारे पड़ रहे।

प्रातःकाल किसी के जोर से बोलने की आवाज सुन शिवटहल की नींद खुल गई। देखा जमींदार की लड़की यानी चिक्कन की बहन प्रभा और रामू पंडित का लड़का प्रसाद दोनों खड़े हैं। तीन चार पुलिस वाले प्रसाद से कह रहे हैं, हम मान नहीं सकता यह तुम्हारी विवाहिता स्त्री है, यह जरूर भगाई हुई है। प्रभा ने कहा मान लीजिये मैं भगाकर ही लाई गई हूँ तो मैंने तो आपको रक्षा के लिये बुलाया नहीं।

अब तक पियरिया, चमकी की भी आखें खुल गई थीं. शिवटहल ने दोनों को दिखाकर कहा—भगवान, धन्य है।

७—प्रेम और श्रद्धा

मास्टर ढुन-मुनलाल का तबादला हो गया था श्री। रवीदत्त चौबे मास्टर नियुक्त होकर आये थे। चारों तरफ इस बात की चर्चा थी, इन्ट्रेन्स पास हैं, अँग्रेजी की दसवीं कक्षा। तार पढ़ सकते हैं, अँग्रेजी में बात कर सकते हैं। हमारे जिले में पथरदेइया के भैया उदय बहादुरलाल को छोड़कर कोई अँग्रेजी नहीं जानता था वह भी इन्ट्रेन्स पास नहीं थे। सबने कहा—चलो अब तो तार लट्ठा उस पार भारत में पढ़वाने तो नहीं जाना पड़ेगा। इन्ट्रेन्स का नाम इतना बड़ा था कि कभी कभी तो लोग कह देते—भई हमें तो विश्वास नहीं होता है, इंट्रेन्स पास होते तो मोगलान (भारत) में डिप्टी होते यहाँ कप्तान गंज पाठशाला में बीस रुपये की मास्टरी करने नहीं आते।

शिवराज खजहनी, दो तपों के बीच में एक ही सरकारी पाठशाला, जिसमें मुश्किल से दर्जा ४ तक की पढ़ाई। हमारे बड़े भाई श्री ठाकुर प्रसाद तथा मैं दोनों एक ही पाठशाला में पढ़ते। मास्टर ढुन-मुनलाल में कायस्थ होने के नाते मिलनसारी का स्वाभाविक गुण था। पिता जी से बराबर मिलते जुलते रहते थे। जिस लाड़ प्यार से हम लोग घर रहते वैसे ही पाठशाला में। मास्टर रविदत्त जी ने पढ़ाना आरम्भ किया, दो-तीन रोज से हम लोग गैर हाजिर थे, जो लड़के पढ़ने गये थे, उन्होंने बताया मास्टर क्या है पूरे यमदूत हैं, बड़े ही सख्त हैं। प्रार्थना होने के पहले

न पहुँचे तो खैरियत नहीं। हमारे तो रोएँ खड़े हो गये क्योंकि तीन रोज की गैर हाजिरी थी। पिता जी ने लड़के को देखकर कहा—पढ़ाई होती है। उसने कहा—हाँ। मुझसे प्रश्न हुआ तुम लोग क्यों नहीं गये ? कल जाऊँगा कह कर मैं खिसक गया।

दूसरे दिन जाना पड़ा। स्कूल जाता तो था कछुए की चाल, आता खरगोश की चाल से। पहुँचा तो प्रार्थना समाप्त हो गई थी। खुले गले का कोट चूड़ीदार पायजामा बहुत ही हृष्ट पुष्ट छड़ी उठाकर कहा—इधर आओ, मैं गया, बोले हाथ फैलाओ, तीन दिन से कहाँ थे ?

छड़ी पड़ने के पहिले ही मैं चीख पड़ा, रोते हुए कहा इसी लिये तो मैं आता नहीं था, सब लोग कहते थे नये मास्टर साहब बहुत पीटते हैं, पुराने मास्टर साहब ने तो हमें कभी कान पकड़ कर उठने बैठने को भी नहीं कहा।

मैंने देखा उन्हें कुछ हँसी आ गई है, कुछ ढाढ़स हुई।

हँसकर बोले—और इसी तरह तुम गैर हाजिरी करते रहे ?

नहीं मास्टर साहब एक दिन भी नहीं, पुराने मास्टर साहब तो कहते थे, तुम बड़े अच्छे लड़के हो अच्छे लड़के नहीं पिटते !

मास्टर साहब को हँसी आ गई— कहा अच्छा जाओ आज छोड़े दे रहा हूँ, अगर अच्छे लड़के तुम साबित हुए तो मैं ही क्यों पीटूँगा ?

जान बची तो लाखो पाऐ, दर्जे में जाकर पढ़ने लगे।

गैर हाजिरी तो मैं पहले भी अवश्य करता था, किन्तु अब मुझे हर समय ख्याल हो जाता, मैं कह चुका हूँ कि एक दिन की भी गैरहाजिरी नहीं करता ? प्रार्थना के बाद पहुँचने पर केवल दोनों हाथ फैलाकर दो-दो छड़ी। अब मैं इस समय से चलता कि जिस रफ्तार से मैं चलता हूँ उससे भी समय से ही पहुँचू। कभी कभी

तो बहुत ही पहिले पहुँच जाता और स्कूल के पास भड़भूजे के यहाँ बैठकर गप्पें लड़ाता। जब तक मास्टर साहब नहीं आ जाते या भड़भूजे की माँ नहीं कहती "बच्चा धोतिया नाहीं दे बौ"। एक दिन बुढ़िया से मैंने पूछा—क्यों इतनी गन्दी और फटी धोती पहने हो? बुढ़िया ने कहा—भैया तोहार जब विआह होई चिउरा कूटब धोती पाइब तब पहिरबा। नवे वर्ष में मैं प्रवेश कर रहा था, दूसरे लड़कों की भाँति मैं शादी के नाम से शर्माता नहीं। बहुधा लोग अपने बच्चों को शादी विवाह संबन्धित बातों में दिलचस्पी लेते देख डाट देते हैं। आधुनिक युग के मनोवैज्ञानिकों का मत है, कि मनुष्यों की तीन प्रवृत्तियाँ स्वाभाविक एवं जन्मजात होती है, सेक्स (यौन) हर्ड (ख्याति) ईगो (अहं) प्राचीन युग के हमारे महर्षियों ने भी लोकेषणा, पुत्रैषणा, वित्तैषणा के रूप में इन प्रवृत्तियों के अस्तित्व को स्वीकार किया। मनोवैज्ञानिकों ने तो यहाँ तक कहा है कि बच्चों को इन प्रवृत्तियों की आवश्यकतानुसार प्रकाशन का मौका यदि दिया जाय तो उनके शारीरिक एवं मानसिक विकास में सहायक होती हैं।

हमारे घर वाले इस रहस्य के जानकार थे, ऐसी बात नहीं। फिर भी लाड़ प्यार के नाते कहते, भैया तुम्हारी शादी कर दें मैं कहता—हाँ। फिर बातें होती भैया की शादी होगी, दुलहिन आवेगी, बाजे बजेंगे। मुझे यह बातें बहुत ही मधुर मालूम होतीं।

आज मुझे बुढ़िया की बात भी बहुत अच्छी लग रही थी। खूब ऊँची ऊँची बातें करने के बाद कहा—जानत हो तोहार विआह के करे इहाँ होई। अब मैं जरा और मन लगाकर सुनने लगा। बोली—उन्हाँ कड़िया भर रुपया मिली, कूकुर मिली। मैं चौंका फिर कहा—गदहा मिली। हमारे और कान खड़े हो

गये। हमारे यहाँ संगतरास को पत्थरकट कहा जाता है। जब कहा—पत्थरकटा के बिटियवा से। मैं बहुत झेंपा, भागकर स्कूल में जा बैठा। अब बुढ़िया के मुहँ से धोती की बात सुनते ही मैं भाग जाता।

भड़भूजे की दूकान हम लोगों का अड्डा था, भोजन करके दोपहर को छुट्टी होती सभी वहीं भूना भुनाते। मैं तो आते ही पहले हाजिरी वहीं देता। एक दिन एक बहुत ही खूबसूरत लड़की जिसके हाथ में मूँज के बुने हुये बर्तन नीचे ऊपर दो थे भूना भुनाने आ रही थी, समवयस्क समझकर बुढ़िया ने कहा—देखो भैया, ऐसे तोहार बिआह होई। मेरा मन खिल गया। मुझे बुढ़िया की बात वृद्ध वाक्य सी लगी। लड़की की अपनी सादगी भोलापन मेरे मन को भा गया। मैंने उसे खूब तन्मयता से देखा। भूना भुनाकर लड़की अपने घर गई, मैं स्कूल।

मैं गैरहाजिरी अब बिल्कुल नहीं करता, पहले तो मास्टर साहब के डन्डे के डर से, अब डर नहीं; आकर्षण था, स्कूल से आते जाते समय बुढ़िया की बताई हुई लड़की को एक नजर अवश्य देख लेता। पहले घर से स्कूल जाते समय रास्ते का कुछ ठीक नहीं रहता, अब उस मार्ग को जिधर होके उस बालिका का घर पड़ता था जाने में मुझे लोभ होता। कम से कम दिन में एक बार अवश्य स्वयं को दूल्हा उसको दूल्हन बनाकर कल्पना के मधुर जगत में मैं विचरण करता। उसे हमारी भावनाओं का क्या पता हो सकता था। मेरी भावनाओं का आधार तो बुढ़िया की बातें थीं, इससे तुम्हारी शादी होगी। उसको इनका थोड़े ही ज्ञान था। अब हमें उससे प्रेम हो गया था, किन्तु हमारे प्रेम की परिभाषा आज की दूषित परिभाषा नहीं,बल्कि पवित्र थी, जो एक बालक के हृदय में समा गई थी।

तेरह साल की अवस्था में हमारा यज्ञोपवीत हुआ, वह भी आई भीख डालने, मेरे पैर भी धोये, तिलक लगाया, जो लाई थी उसे उसने मेरे दोनों हाथों पर रख दिया। इतने नजदीक से मैंने उसे कभी नहीं देखा था। वह चलने लगी, बर्तन खाली करके उसके हाथ में थमाते समय पं० रामसमुझ ने कहा—अक्षत तो दे दो भाई। मैंने सामने रखे हुये हल्दी से रंगे कुछ चावल उसके बर्तन में डाल दिये। वह चली गई।

अब हमारे गाँव में एक संस्कृत पाठशाला भी खुल गई थी। जिसमें प्रवेश सबसे पहले हम पाँच लड़कों का हुआ—भवनाथ, जगदीश्वर, सुरेन्द्र नारायण, रामसमुझ एक मैं स्वयं, पूरे पाँच पाण्डव। ब्रह्मचर्य एवं सदाचार सम्बन्धी बातें भी कभी कभी हम लोगों को गुरू जी—पं० बाबूराम त्रिपाठी बताते रहते थे। कुछ रोज तक तो उनकी बातें समझ में नहीं आयीं बाद कुछ दिन के जब बातें समझ में आने लगी तो मुझे लगा जैसे उस लड़की के विषय में जितना मैं सोचता हूँ, वह भी ब्रह्मचर्य एवं सदाचार दोनों ही के नियमों के विरुद्ध है।

बगैर कारण के कोई कार्य नहीं होता। हमारी शादी के लिये लोग आये तय हुआ तिलक चढ़ गया। पाठशाला के सभापति को आपत्ति हुई, बड़े चचा तो तन गये लेकिन पिता जी ने सोचा—लड़के की जिन्दगी बनाने के लिये तो कहते हैं; लड़की वाले को खबर दी गई इस वर्ष शादी नहीं होगी अगर रुक सकते हैं तो ठीक है, नहीं तो तिलक वापिस ले जायें। बेचारे लड़की वाले आये बहुत गिड़गिड़ाये कहा—संकल्प की हुई चीज कैसे वापिस करें, टीका चढ़ने के माने आधी शादी। सभापति जी का मन रखने के लिये झूठी कानूनी अड़चन दिखाई गई। वह कह सकता था कि शादी तय करते समय इसका विचार आप लोगों ने क्यों

नहीं किया। किन्तु वह कुछ न बोला—तिलक वापस लेकर चला गया।

पाठशाले के नियमानुसार मैं भी त्रिकाल संध्या करता, आदर्श और सदाचार की घुट्टी पिलाकर गुरू जी बाल मन को हमेशा स्वस्थ देखना चाहते थे। नित्य क्रिया से निवृत होने के बाद शयन तक के जितने भी कार्य होते, उसमें समय की पूरी पाबन्दी होती। पाठशाले को देखकर प्राचीन युग के ऋषियों के आश्रमों का दृश्य सामने आ जाता जब विद्यार्थियों को सामने बैठाकर एक वेदी पर कुशासनी बिछाकर पं० बाबूराम त्रिपाठी केवल एक चद्दर ओढ़कर पढ़ाते। हर पक्ष में अन्त में सभी छात्रों को सिर घुटा लेना पड़ता, वस्त्रों में सादगी का विशेष ध्यान रखा जाता।

मिलावट किसी चीज की अच्छी नहीं होती, प्रबन्ध समिति ने निश्चय किया कि अँग्रेजी की भी पढ़ाई होगी। मास्टर आये, स्काउटिंग का काम शुरू हुआ। पूर्व और पश्चिम का संघर्ष,या यों कहिये अर्वाचीन-प्राचीन का द्वन्द, आरम्भ हुआ। नई सभ्यता की प्राचीन सभ्यता के ऊपर विजय हुआ। संस्कृत उस समय एक ऐसी विद्या थी जिसे लोग केवल भोजन के लिये ही अपने बच्चों को पढ़ाते थे। अब गुरू जी के अनुशासन में केवल वही छात्र रह गये जो पाठशाला से भोजन पाते थे। भोजन बन्द होने के डर से ही वे ब्रह्मचारी के भेष में थे उनका भी हृदय यह स्वीकार नहीं कर रहा था।

मास्टर रघुवंशलाल जी ड्रिल बता रहे थे, एक व्यक्ति हम लोगों की तरफ बड़ी गौर से देख रहा था। समाप्त होते ही मुझसे पिता जी के विषय में पूँछा—मैंने कहा—घर पर हैं।

४ बजे के बाद मुझे मालूम हुआ हमारी शादी तय हो गई

है जो सज्जन वहाँ गये थे उन्हीं की पुत्री से। तिलक चढ़ा, निमंत्रण पत्र बंटना शुरू हो गये। जब निमन्त्रण पत्र हमारे मामा के यहाँ पहुँचा तो वे उचक पड़े। एक सज्जन को भय बरिच्छा तिलक के साथ लेकर आ धमके, कहा भानजा हमारा और मुझसे राय तक न ली जाय। पुनः तिलक वापिस करने का प्रश्न हुआ मेरे भावी ससुर जी बुलाये गये। अब क्या कहकर वापिस किया जाय, डाक की भी बोली हुई। हमारे होने वाले ससुर भी अपनी एक हस्ती रखते थे उनके सामने मामाके उम्मेदवार न टिक सके! पुराने लोग चापलूसी बहुत पसन्द करते थे, इस अस्त्र को भी हमारे भावी ससुर ने स्वर्गीय पं० राजेश्वर तिवारी हमारे बड़े चचा पर चलाया। बड़ी तगड़ी कामयाबी रही बड़े चचा ने ससुर जी से कहा—जाओ! इन्तजाम पात करो। दिन सिर पर आ गया इधर मैं निपट लूँगा। ससुर जी चले गये, क्यों? पता चला कि लड़के के चचा ने अपनी स्वीकृति देकर भेज दिया है। दिन निकलने के पूर्व ही दूसरे रोज हमारे मामा की पार्टी ने बहादुर गंज छोड़ दिया।

हमारी शादी में भी वह लड़की आई, औरतों के साथ खूब गाया बहुत खुश थी वह। ब्याह कर लौटा तब भी वह थी। दूल्हन को सबसे पहले उसने ही देखकर बताया था, दुलहिन बड़ी ही सुन्दर है।

उसकी शादी में मैं गया मुझे प्रसन्नता थी कि चलो तमाशे देखने को मिलेंगे! सुना वर अनुकूल नहीं, मैंने भी देखा बात सच थी, मुझे बड़ा दुःख हुआ, मैं उससे प्रेम करता था, इसीलिये। वह चली गई ससुराल।

कुछ ही दिन बाद मैंने सुना कि वह विधवा हो गई। मेरी आँखें नम हो गईं; सोचा—क्या ईश्वर ने जितना दिया, उसके भी योग्य वह नहीं थी।

नेपाल में क्रान्ति के सूत्रपात होते ही मुझे उसमें कूद पड़ना पड़ा। पाँच साल तक राणाओं से बगावत, उसके बाद पाँच साल के करीब तथा कथित प्रजातन्त्र सरकार से। लगभग दस वर्ष के फरारी जीवन के बाद जब महाराजाधिराज की शाही घोषणा हुई तब में घर आया। एक एक करके सबसे मिला। कुछ लोग स्वयं आये कुछ लोगों के यहाँ मैं स्वयं गया। सभी से मिल चुका, फिर भी कभी कभी सोचता कि अभी कोई बाकी है।

नव दस वर्ष बाद दिवाली आई थी, सोचा चलो टहल आयें बाहर सड़क पर चलते चलते एकाएक रुका हमारी दृष्टि पड़ी। सफेद साड़ी पहिने, केश कटाये।

—पूर्ण तपस्विनी मालूम हो रही थी वह। तन को सुखाकर मन को पवित्र कर वह तपस्या कर रही थी। मैंने देखा जवानी के कोई लक्षण उसमें बाकी न थे, उन्हें वह मिटा चुकी थी,दुनिया में इसके लिये कुछ नहीं था। मैंने सोचा फिर यह तपस्या क्यों ? अपने आप उत्तर मिला—सर्वेभवन्तु सुखिनः। श्रद्धा से मेरा मस्तक झुक गया।

मैं जीवन के प्रथम चरण में उसे प्रेम करता था। माना कि वह पवित्र था, फिर भी उसकी सीमा है, वह संकुचित माना गया है। अब मैं उससे श्रद्धा करता हूँ, जो असीम है, विशाल है।

८—मैं मूर्ख हूँ ?

आज से सत्ताईसौ वर्ष पूर्व दाक्षी पुत्र शालंक पाणिनी ने, अपने गुरू के यहाँ कात्यायन से शास्त्रार्थ में पराजित हो, भगवान शंकर को अपनी तपस्या से प्रसन्न किया। महानट भगवान शंकर ने ताण्डव नृत्य करते समय चौदह बार अपना डमरू बजाया जिसके शब्द से चौदह सूत्र निकले उन्हीं सूत्रों से व्याकृति-सूत्र-निर्माण शक्ति मिली, शालंक पाणिनी सर्व प्रथम भाषा के व्याकरण के प्रणेता हुये। जिस कात्यायन ने उनको शास्त्रार्थ में पराजित किया था उन्हीं से उन्होंने व्याकरण का प्रचार किया।

उसी व्याकरण के गहन अध्ययन के बाद भगवान पातञ्जलि ने महेश्वर की प्रेरणा से महाभाष्य नाम के ग्रन्थ का निर्माण किया। जिसके ऊपर मनु, भर्तृहरि, कैयढ, आदि विद्वानों ने अनेक ग्रन्थ लिखे। तत्पश्चात् शब्द कौस्तुभ बट्टोदीक्षित ने उसके निचोड़ से वैदाकरण सिद्धान्त कौमुदी तथा उसी का आख्यान मनोरमा की रचना की। फक्किका की क्लिष्टता से सुकुमार बुद्धि बालकों को काफी परेशानी होती थी, पंद्रहवीं सदी में वरदराजाचार्य ने बालकों की कठिनाई को दूर करने के लिये सार, मध्य, लघु कौमुदी तथा जीवार्ण मंजरी की, रचना की। जो बालकों को बुद्धिगम्य हो। निश्चय ही वरदराजाचार्य अपने प्रयास में सफल रहे। लघु कौमुदी एक ऐसा ग्रन्थ है, जो बालकों के लिये भाषा के समुद्र को पार करने में नौका का काम देती है।

प्रातःस्मरणीय आचार्य महादेव प्रसाद तत्कालीन प्रधानाचार्य संस्कृत पाठशाला तौलिहवा, वर्तमान कुलपति सांगवेद विद्यालय साड़ी जिला बस्ती (भारत) के प्रिय शिष्य पं० बाबूराम त्रिपाठी ने हमारे प्रान्त में आकर अविद्या के अन्धकार में विद्या की ज्योति जलाई। श्रीराम गोरखा पाठशाला की स्थापना हुई, संस्कृत की पढ़ाई, जिसे लोग केवल ब्राह्मणों की ही भाषा समझते थे। इस भावना ने तथा संस्कृत भाषा के साथ हिन्दू जाति की व्यापक उदासीनता ने संस्कृत साहित्य को जो चोट पहुँचाई है उसको आने वाली हिन्दू सन्तान कभी भी अच्छा नहीं कहेगी। संस्कृत के छात्रों के प्रति धार्मिकों को छोड़कर किसी को सहानुभूति नहीं होती इसका भी कारण था, नेपाल की अधिसंख्यक जनता रोजी-रोटी के लिये भारत जाती है जहाँ की राज्य भाषा अंग्रेजी, उर्दू है। स्वार्थ के बिना सहानुभूति करने वाले कम होते हैं, लोग सोचते हैं, यदि हम किसी अंग्रेजी पढ़ने वाले छात्र को सहायता देते हैं, तो वह पढ़ लिखकर Self Prodective (पैदा करने वाला) होगा, अगर किसी पद पर पहुँच गया तो कभी काम भी आयेगा। उन्हें संस्कृत के छात्रों से ऐसी आशा नहीं थी। बच्चे भी उससे दूर भागते, निःशुल्क शिक्षा छात्रवृति (भोजन) देने पर भी पढ़ने वालों की कमी ही रहती। पिता जी ने हमारा प्रवेश कराते समय कहा था—कोई नौकरी तो करानी नहीं है। धर्म-कर्म की कुछ बातें जान जायगा। एक बार भी यदि बाल्मीकीय रामायण इसके मुंह से सुन लिया तो इसका हमारे कुल में पैदा होना सफल हो जायगा।

मैं प्रथमा की तैयारी कर रहा था। लघु कौमुदी, रघुवंश, तर्क संग्रह, चन्द संग्रह, वाल्मीकीय मूल रामायण का कुछ अंश, हिन्दी पाठमाला; इतनी किताबें मुझे पढ़नी होतीं। मेहनती मैं बिलकुल नहीं था। साहित्य में हमारी एक खास रुचि बाल्य काल ही से

थी। रघुवंश, छन्द संग्रह, वालमीकीय रामायण तो मैं बड़े ही प्रेम से पढ़ता, किन्तु लघु-कौमुदी और तर्क संग्रह तो मुझे फूटी आँखों नहीं भाती। गुरू जी (पं० बाबूराम त्रिपाठी) की अध्यन-शैली समय के अनुसार इतनी सुन्दर थी, कि जो कुछ पढ़ाते खूब समझता, उसे हृदयंगम भी कर लेता, किन्तु सूत्रों और वृत्तियों को जब रह-रहकर सुनाने को कहा जाता,तो जैसे मेरे ऊपर पहाड़ टूट पड़ता। दिन भर माँगे तो दिया, रात भर माँगे तो दिया भर। जहाँ गन्ध है,वह पृथ्वी है। वह दो प्रकार की है एक नित्य, एक अनित्य। वह तो हमारी समझ में आता किन्तु तर्क संग्रह को रट कर लक्षण और भेद को सुनाना हमारे बस की बात नहीं थी। इतनी क्षमता कहां कि इसी का संस्कृत में अनुवाद कर सकूँ।

सभापति द्वारा पं० रामसमुझ मिश्र आचार्य ही नियुक्त हुये, प्रथमा के ऊपर के छात्रों को पढ़ाने के लिये। क्योंकि ऊँची कक्षा के छात्र कम थे, इसलिये खाली घण्टे में हम लोग आचार्य जी से भी पढ़ते। गुरू जी का कहना था चाहे जिस भी योग्यता का व्यक्ति क्यों न आये मैं ही प्रधान अध्यापक रहूँगा। यह स्वीकार तो कर लिया था आचार्य जी ने, किन्तु उनके दिल में यह बात खटकती, एक आचार्य द्वितीयाध्यापक, एक मध्यमा प्रधान। इसका कारण कुछ भी हो किन्तु अक्सर ऐसा देखा गया है, कि संस्कृत के विद्वानों में व्यवहार कुशलता, विशाल हृदयता की कमी होती है। कभी कभी छात्रों के सामने वे अपनी इस भावना को बहुत भद्दे तरीके से व्यक्त करते हैं।

पन्द्रहवीं सदी के पूर्व जब पाश्चात्य विद्वान कनिङ्गहम आया तो उसे माघ की किरातर्जुनी, कालीदास के कुमार-सम्भव को पढ़ने की इच्छा हुई। जिसके लिये उसने व्याकरण का अध्ययन किया स्वदेश जाकर उसने इंगलिश भाषा को (ग्रामर) व्याकरण

प्रदान किया। व्याकरण विहीन इंगलिश भाषा शैक्सपेरियन इंगलिश कहकर एक किनारे रख दी गई। पाणिनी की कृपा से समुद्र पार सिसरो ऐसे कूटनीति तथा राजनीति के आचार्य, तासितस ऐसे समाज वेत्ता, प्लेटो ऐसे दार्शनिक, डाक्टर जानसन, जार्ज बर्नार्डशा ऐसे भाषा के पं० हो गये। अंग्रेजी भाषा विश्व की भाषा हो गई, जिसका पन्द्रहवीं सदी के पूर्व कोई आस्तित्व ही न था, किन्तु हिन्दी, संस्कृत स्वयं अपनी सन्तानों की उपेक्षा एवं उदासीनता के कारण अपना स्थान छोड़ने को बाध्य हुई जिस पर कब्जा अन्य भाषाओं का हुआ। जैसे कुएँ से पानी निकालने के लिये लोटा रस्सी की जरूरत होती है, अँग्रेजों ने व्याकरण को रस्सी लोटा बनाया, मुख्य लक्ष्य उनका था पानी, पा गये। हमारे वैयाकरणियों का लक्ष्य तो है पानी ही, किन्तु सब कुछ व्याकरण ही, प्रतिफल असफलता हुई।

आचार्य जी संस्कृत कैसी बोलते थे। इसका तो मुझे क्या ज्ञान हो सकता था किन्तु उनकी हिन्दी की गलती को प्रत्येक समझ सकता था। जल में रहकर भी वह प्यासे ही रह गये, जिस व्याकरण ने इंगलिश आदि भाषाओं को समृद्धि दी, उसके द्वारा वह अपनी हिन्दी भी नहीं सुधार सके। क्रोध, प्रमाद, आत्म-हीनता की भावना में वे सदा जलते रहे।

हम नीचे आचार्य जी से छन्द पढ़ रहे थे, ऊपर गुरू जी बच्चों को रघुवंश पढ़ा रहे थे, पाठशाला दो तल्ला थी। रघुवंश के पाठ का प्रसंग था, जब राजा दिलीप पुत्रेच्छा से कामधेनु की पुत्री नंदनी को अपने यहाँ लाये तो उसे अपने हाथों बन में ले जाकर चराते थे। एक दिन परीक्षा के लिये भगवान शंकर ने सिंह का रूप धारण कर नंदनी को दबा लिया। राजा दिलीप ने तरकश से बाण निकालकर मारना चाहा तो उनके हाथ तरकश से चिपक गये। असहाय राजा ने सिंह से कहा—तुम नंदनी को

छोड़ दो, मुझे खा लो। सिंह ने उत्तर में कहा—इतना समझाकर ऊँचे स्वर से गुरू जी ने श्लोक को पढ़ा:—

एकातपत्रं जगतः प्रभुत्वं नवंवयः कान्ति मिदं पुश्च।
अल्पस्य हेतोर्बहु हातुमिच्छन् बिचार मूढ़: प्रतिमाषिमेत्वं॥

अन्वय, समास, शब्दार्थ, भावार्थ यह सब कुछ बताने के पहले ही गुरू जी को उच्च स्वर से श्लोक को पढ़ने की आदत थी। भावार्थ बताया:—

सिंह ने कहा—"राजा, तुम्हारा एक छत्र राज्य, सारे संसार के मालिक, नई उमर, इतने खूबसूरत तुम हो। थोड़े के लिये, इतनी बड़ी जिन्दगी के साथ सारी चीजों को तुम छोड़ रहे हो हमारी समझ में तुम बेवकूफ हो"। गुरू जी ने पढ़ाकर पुनः श्लोक को उसी तरह दुहराया।

आचार्य जी की भृकुटी टेढ़ी हो गई। उन्होंने मुझसे कहा "यह श्लोक मुझ पर कहा गया है"। बात मेरी समझ में नहीं आई, मैंने पूछा–स्पष्ट करते हुए बोले–"सिंह नहीं यह मध्यमा पास ब्राह्मण कह रहा है मुझको" "तुम कितने बड़े विद्वान हो, आचार्य का प्रमाण-पत्र, नव-जवान, खूबसूरत भी हो। बीस रुपये के लिये तुम इस सबको भूल गये। द्वितीय, अध्यापकी करते जा रहे हो हमारे विचार से तो तुम मूर्ख हो"। आचार्य जी बिगड़ पड़े, गुरू जी को कुछ कुवाक्य भी कह दिये, सभी देख रहे थे, अब मल्ल युद्ध की नौबत आई थी तब, शायद जो रुतबा गुरू जी का था आचार्य जी का होता तो अवश्य भिड़ पड़ते ?

क्रोध के आवेश में आचार्य जी गुरू जी की कोई भी बात न सुनकर बहुत देर तक जब तक उन्हें शान्त नहीं करा गया, केवल यही रट लगाये रह गये—मैं मूर्ख हूँ ! मैं मूर्ख हूँ !! मैं मूर्ख हूँ !!!"

६—जेल का रोमान्स

"बाबू जी आठ आना पैसा होगा" ?

"क्या होगा" ?

"बहुत सख्त जरूरत है बाबू जी"

"वह कौनसी जरूरत है जिसको तुम्हें बताने में संकोच है।"

"मैं उसे देने ही जा रहा था कि एक बुड्ढे को देखकर वह खिसक गया"

"पैसे उसने बहुत ही धीरे मांगे थे, मुझे बड़ा ताज्जुब हुआ जब बुड्ढे ने कहा—पैसा मांग रहा था ? मैंने कहा—हां। वह हंस पड़ा उसके पैसा मांगने के पीछे मुझे कुछ रहस्य मालूम हुआ।

मैंने पूँछा—क्यों ? क्या बात है। बुड्ढे ने जबाब दिया—"अपने आप मालूम हो जायगा, अभी आप आयें हैं, सारी बातें एक ही साथ एक ही दिन में थोड़े ही मालूम हो जायेंगी।"

प्रस्तुत पुस्तक को लिखने के बाद जब मैं दिमाग ताजा करना चाहता तो चक्कर में खूब टहलता। विपत्ति में सहानुभूति के कुछ शब्द ही मनुष्य के लिये काफी होते हैं। फिर ऐसी जगह जहाँ सभी विपत्ति में हों सहानुभूति का आदान प्रदान चलता है। कुछ अपनी कहो, कुछ मेरी सुनो। पाप करने के बाद मनुष्य को उसका ज्ञान होता है जिसे कुछ लोग स्वीकार करते हैं, कुछ उसे छिपाना चाहते हैं। जिस बात को हम छिपाना चाहते हैं, वह

उतनी ही रहस्यमयी होकर लोगों की उत्सुकता को अपनी ओर खींचती है। कोई कुछ हो, मुझसे मतलब, विपत्ति को किसी की थोड़े ही बांट लेता है। हमे सबसे सहानुभूति थी, किसी के पाप से मुझे क्या मतलब ? दक्षिण फाटक से उत्तर के वैरेक तक जाता, लौटता, फिर जाता। मैं दक्षिण सीधे जा रहा था। वही व्यक्ति जिसने पैसा मांगा था, जाते समय वह अन्य व्यक्तियों से बैठा तल्लीन हो बातें करता था। एकाएक मेरे बराबर आ गया, जेल के फाटक पर खड़ा होकर लगा देखने। थोड़ी देर बाद एक औरत, साफ-सुथरी हाथ में घड़ा लिये, सामने जाती हुई दिखाई दी, उसने बेड़ी पैर की खनखना दी वह ठिठक गई दोनों ने एक दूसरे को देखा, नजर पड़ते ही दोनों के आंसू गिरने लगे। जहाँ वह स्त्री खड़ी थी, अक्सर लोगों के घर वाले आते, वहीं खड़े होकर मिलते, नेपाल की जेलों में कोई खास दिन नहीं होता। रोज बंदियों के घर वाले आते, मिला करते। उसने आंसू पोंछकर कुछ पैसे अन्दर से फेंक दिये, औरत ने झुककर उठा लिये। मैंने समझा शायद इसकी बीबी हो। मुझे अब उसका नाम भी मालूम हो गया था, मैं पूछने ही वाला था भगवती ! यह तुम्हारी कौन है ?

सूबेदार जेल ने उस औरत को देखा, डाटते हुये कहा—जा यहां से, और एक सिपाही से कहा—जाओ मिश्राइन को बन्द करदो ?

पहले मैंने सोचा था बीबी होगी, मिलने आई है, बन्दिनी मालूम हुई तो सोचा हो सकता है, किसी अभियोग में दोनों एक साथ आये हों,किन्तु जब सुना मिश्राइन को बन्द कर दो तो मुझे आश्चर्य हुआ, भगवती कौम का बनिया था। अब मेरी भगवती के विषय में जानने की उत्सुकता बढ़ी।

एक दिन वह मेरे पास आया तो मैंने पूछा—तुम्हारे ऊपर क्या अभियोग है।

वह बोला—कतल

मैंने कहा—कैसा कतल!

उसने कहा—बाबू जी मैं बनिया जात का, भला कतल कर सकता हूँ? बड़ा अँधेर है बाबू जी! इस राज में मुझे फँसाया गया है।

बेड़ी उसकी काफी वज़नी थीं, ऐसी बेड़ियाँ ख़तरनाक होने की द्योतक होती हैं।

मैंने पूछा—तुमने अपराध स्वीकार किया है।

उसने कहा—नहीं

मैंने कहा—फिर तुमको इतनी वज़नी बेड़ी क्यों पड़ीं?

उसने कहा—बाबू जी, एक दिन सबने तय किया कि जेल से भागा जाय, कोशिशें भी हुईं, कामयाब नहीं हुये। भेद खुल गया। एक आदमी जान से गया। बाबू जी मरा जानकर ही तो मुझे छोड़ा गया था, लेकिन पापी प्राण नहीं निकला।

मैंने कहा—जब तुमने अपना अपराध भी स्वीकार नहीं किया है, यह भी कहते हो कि तुम्हें फँसाया गया है, तो तुम सफाई भी तो पा सकते हो। उसका चेहरा फक हो गया,मेरे पास उसका रुकना दूभर हो गया। मैंने कहा—भगवती तुमने कतल अवश्य किये हैं; वह कुछ न बोला। मैंने समझ लिया कि इसके अपराधी मन को यह विश्वास जब नहीं हुआ कि छूट भी सकता है, तभी उसने भागने का प्रयत्न किया है।

जिले के हैड क्वार्टर को तौलिहवा से लगभग चार मील की दूरी के एक गाँव से खबर मिली कि यहाँ के एक बूढ़े पंडित का अर्से से कुछ पता नहीं है। पंडित मिश्र ब्राह्मण थे गांव वालों को

उनसे सहानुभूति थी। गांव वालों ने यह भी बताया था, कि गांव के एक बनिये से मिश्र पंडित की पतोहू से नाजायज सम्बन्ध की भी शङ्का लोगों को है।

इन्कायरी हुई, मिश्र की पतोहू मिश्राइन ने बयान किया कि हमारे ससुर तीर्थ यात्रा को निकले थे, जो अब तक नहीं आये। लोगोंका कहना था कि भगवती बनिये का मिश्राइन से अवैधानिक सम्बंध था, जो पंडित के लड़के को तो डरा धमकाकर हमेशा बाहर ही खेदे रहता था, बाकी काँटा थे बेचारे बुढ़ऊ, उनको भी भगवती बनिये ने मिश्राइन तथा अपने बीच मुहब्बत के रास्ते को साफ करने के लिये कत्ल कर दिया है। पंडित अपनी सिधाई, ईमानदारी के नाते काफी लोकप्रिय थे, इस जघन्य पाप का प्रायश्चित करवाने के लिये स्थानीय लोगों ने अपनी शङ्का को सरकार के सामने रख दिया। मुकद्दमा चला मिश्राइन तथा भगवती बनिये को जेल की हवा खानी पड़ी।

प्रेम अंधा होता है इसे तो, अनुभव न होने पर भी पढ़कर-गुनकर मैंने समझ लिया था। अब मेरी समझ में यह बात आई कि प्रेम अविवेकी और निर्दयी भी होता है। प्रेम के नशे में ही तो बुड्ढे ब्रह्मण की हत्या की गई होगी? फिर प्रेम को निर्दय कहना प्रेम के साथ अन्याय थोड़े ही होगा। अगर हो भी तो प्रेम को तो उसी साहित्यकार से इसकी शिकायत करनी चाहिये जिसने कि स्त्री और पुरुष के अवैधानिक यौन सम्बंध के बीच में, उसकी प्रतिमा का किञ्चित भी ध्यान न रख कर, उसे अपनी कलम से स्थान दिया।

जेल में भी दोनों के रोमांस में यथा शक्ति, यथा साध्य कमी नहीं आई। तीन पाव चावल, तीन आने पैसे जो नेपाल सरकार कैदियों को देती है उसमें से भी बचाकर भगवती कुछ न कुछ

मिश्राइन को अवश्य भेजता। जो मिलता उतने में अन्य बन्दियों का निर्वाह हो जाता किन्तु भगवती को हमेशा पैसों की कमी रहती।

लोगों को गन्ध तो बहुत पहले ही मिल चुकी थी किन्तु एक दिन प्रातः समय से पूर्व ही बैरेक खोल दिये गये जेलर सूबेदार ने आदेश दिया—सभी खा-पकाकर तैयार हो जाओ आज पालपा पहाड़ पर चालान होगा। जिस प्रकार पहाड़ी लोगों का तराई में रहना मुश्किल होता है, उसी तरह तराई वालों के लिये भी पहाड़, खासकर पालपा की जलवायु माफिक नहीं। सभी बंदियों के होश उड़े हुये थे, कौन कौन जायगा ? किसी को नहीं मालूम। राजनैतिकों को सरकार चाहे किसी भी अभियोग में बन्द करे, जेल में उनका नाम सुरक्षा पड़ ही जाता है। एक आदमी ने मुझ से पूँछा सुरक्षा बाबू किसको भेजा जायगा, वह घबड़ाहट में था। मैंने कहा—मुझे मालूम नहीं भाई। पकाया सभी ने, पेट भर कोई न खा सका।

फौज का लैफ्टिनेन्ट आशा, सैनिकों के साथ आठ आदमियों का नाम बोल गया, जिसमें एक भगवती बनिया भी था। उसके प्राण उड़ गये, सूबेदार जेलर के पैर पकड़ कर लगा बुमकार छोड़ कर रोने, उनके रोने की आवाज हमारे बैरेक तक आ रही थी। मोटर स्टार्ट हुई एक सैनिक ने डपटकर कहा, निकलो बाहर।

मोटर भर कर आठ आदमियों को हर हराती हुई चली गई। किसी के रोने की आवाज सुनकर मैंने पूँछा—अब कौन रो रहा है। एक बन्दी ने बतलाया मिश्राइन। आवाज दर असल जनाने बैरेक की तरफ से आ रही थी।

१०—बीसवीं सदी की जेल

आधुनिक वैज्ञानिकों ने मनुष्य के रक्त का विश्लेषण करके यह सिद्ध कर दिया है कि तत्त्वतः सभी मनुष्य एक हैं। जीवन-विज्ञान मनुष्य मात्र को एक जाति (species) मानता है। मनुष्य की एकता का सिद्धान्त जबकि वैज्ञानिक प्रयोगों पर आधारित है, तो इसे भी उतना सम्मान-जितना कि हम अन्य वैज्ञानिक नियमों को देते हैं—नहीं देना, हमारी अबौद्धिकता का ही परिचय देता है। इस विषय में हम अबौद्धिक हैं, इस सत्य को मानना आज के लिये अत्यावश्क है। अन्यथा हमारी मानव जाति ही नहीं बचेगी। हमारा कर्तव्य है मनुष्य के सम्मान की रक्षा करना और कराना। आज व्यक्ति किसी आर्थिक राजनैतिक मशीन का एक पुर्जा भर रह गया है। इसके अतिरिक्त उसका कोई महत्व नहीं। वह अपने समुदाय का साधन हो गया है। इसके विरुद्ध आज से १५० वर्ष पूर्व जर्मन दार्शनिक इम्मेनुएल कांट (Immanual kant) ने अपना मत प्रतिपादित किया था, मनुष्य तो कभी साधन नहीं बन सकता, वह तो अंतिम साध्य है। कोई भी सिद्धान्त तभी सफल हो सकता है जबकि वह व्यक्ति के स्वातंत्र्य और विकास को अपना लक्ष्य बनाता है।

अपराधी को दण्ड मिलना चाहिये; बरबरता के युग से लेकर आज के सभ्यता के युग के विधान का नियम है। फर्क केवल तब और अब में इतना ही है कि उस समय के मानव समाज में

अपराधी के लिये बिना किसी विचार विवेक के कठोर से कठोर दण्ड देना ही प्रचलित था। अपराधी के लिये समाज के हृदय में कोई दया नहीं थी। वह समझता था—इसने समाज के नियमों का पालन नहीं किया, यह समाज द्रोही है।

उस समय का युग निश्चय ही बौद्धिक युग नहीं था उसमें इतनी शक्ति नहीं थी कि वह यह समझ सके—मैं अपने समाज से एक सदस्य को कम कर रहा हूँ। मरीज को दवा इसलिये दी जाती है कि उसके शारीरिक विकार दूर हों, वह स्वस्थ हो। यदि मरीज ही न रहे तो दवा किस काम की। अपराध मनुष्य के अन्दर एक मानसिक बीमारी है। इसको मनोविज्ञान के पंडितों ने मनो-विश्लेषण करके सिद्ध किया है. जिसकी पुष्टि अपराधशास्त्र (Crimnalogy) के विशेषज्ञों ने की है। आज यह सिद्ध हो चुका है कि अपराधियों के हृदय परिवर्त्तन के द्वारा उनको सीधे रास्ते पर लाकर ही अपराधों का निरोध हो सकता है। आज विश्व के प्रगतिशील एवं सभ्य देश बंदियों पर मनवैज्ञानिकों तथा अपराध शास्त्रियों से प्रयोग एवं अनुसंधान करा रहे हैं। बन्दियों के प्रति कर्मचारियों का व्यवहारशिष्ट, सभ्य एवं औदार्य पूर्ण होना चाहिये, यह होता है अपराध शास्त्रियों एवं मनोवैज्ञानिकों का निर्देश। उनका कहना है, अपराध करने के पश्चात अपराधी मन को यह स्वीकार करना पड़ता है कि अपराध किया है, उसे आत्मग्लानि होती है, आत्मभर्त्सना में वह जलता है, उसका नैतिक मन उसके अनैतिक आचरण पर उसको धिक्कारता है—तुमने समाज के नियम का उल्लङ्घन किया है, तुम समाज द्रोही हो, समाज ने तुम्हारा तिरस्कार किया है ?

उसका अनैतिक मन कहता है ठोकर मारो ऐसे समाज को जिसमें तुम्हें सुधारकर अपनाने की शक्ति नहीं ? तुम भी अपना

एक समाज बनाओ ? ऐसे समाज में रहकर ही क्या होगा जिसे अपने कर्तव्य का ध्यान नहीं। जेल के अनैतिक वातावरण में उसके नैतिक मन पर अनैतिक मन की विजय होती है।

मनोविज्ञान का मत है कि उसके नैतिक मन को बढ़ावा देना चाहिये, उसे यह महसूस कराना चाहिये कि समाज का हृदय विशाल है, उसे तुमको अपनी गोद में स्थान देने में कोई संकोच न होगा। दण्ड को तुम प्रायश्चित समझो, प्रायश्चित करके तुम अपने को सुधारो ? इससे अपराधी के नैतिक मन को बढ़ावा मिलता है, अनैतिक मन का दमन होकर उसके मानासिक विकार दूर होते हैं। आज प्रत्येक प्रगतिशील एवं सभ्य देश को इसका एहसास हो रहा है।

आज की जेलें बन्दियों में कर्मण्यता लाने के लिये विभिन्न प्रकार के उद्योगों की केन्द्र हो रही हैं। स्वस्थ भोजन, स्वच्छ वस्त्र, दिया जाता है। उनके स्वास्थ्य के लिये जेल में अस्पताल, शिक्षा के लिये शिक्षक, लाइब्रेरी (पुस्तकालय), सफाई का समुचित प्रबन्ध रहता है, उनको शारीरिक मानसिक दोनों ही प्रकार स्वस्थ रखने का प्रयत्न किया जाता है, आते ही उनका वज़न लिया जाता है। उसमें कमी नहीं आनी चाहिये, इसका ध्यान जेल के कर्मचारियों को रखना पड़ता है, यह उनकी जिम्मेदारी है।

१९५० की क्रान्ति में नेपाल सरकार के आग्रह पर भारत सरकार ने भी मुझे गिरफ्तार करके गोरखपुर की जेल में रखा था। यद्यपि अन्य देशों की अपेक्षा अभी भारत की जेलों में भी आवश्यक सुधार अब तक नहीं हो पाये थे, फिर भी नैपाल के भैरहवा जेल में जब मैं भेजा गया, एक तुलनात्मक अध्यन का जो मौका मिला, उसमें हमें नैपाल तथा भारत की जेलों में जमीन आसमान का अन्तर मिला। उस जेल से अधिक साफ सुथरा तो

किसान अपना मवेशीखाना रखते हैं। क्योंकि उन्हें अपने पशुओं के आराम तकलीफ का ध्यान रहता है! वे समझते हैं कि इन्हीं पशुओं पर ही तो हमारा कृषि जीवन निर्भर है। जिस पर निर्भर है, हमारे बच्चों की रोजी।

नैपाल के भैरहवा जिला जेल की हालत का सुधार हम लोगों ने स्वयं किया था। ढाई तीन सौ राजनैतिक बन्दियों में अन्य अपराधियों का पता नहीं चलता था। गवर्नर से लेकर पूरे अधिकारी थर्राते थे। हम सभी जेल में अपनी मर्जी से थे, सरकार भी समझती थी, जिस दिन चाहेंगे अपने आप बाहर निकल जायेंगे। बात भी सच थी, हम लोग देखते थे, आखिर ये करते क्या हैं? सरकार की नियत हम लोगों को जब मालूम हुई तो एक दिन प्रातः जिला जेल के समूचे रक्षक-कर्मचारी बन्दी थे, और बन्दी कर्मचारी।

पांच छः साल की फरारी के बाद जब नेपाल नरेश की घोषणा हुई तो हम स्वदेश लौटे। लगभग दस साल की बरबाद गृहस्थी को फिर से आबाद करने की इच्छा हुई, उसमें साल भर तक लगा रहा। सभी सरकारी अधिकारी खुश, गवर्नर की रिपोर्ट प्रकाशित हुई जिसमें था रामबरन शर्मा का सहयोग सरकार को मिल रहा है। लोगों को अचम्भा हुआ, होना चाहिये भी, जिसने बाल काल को बिताकर, पूरी जिन्दगी सरकार की मुखालफत में बिताई उसका सरकार के साथ सहयोग कैसा? लोगों ने मुझसे पूछा। मैंने कहा—रचनात्मक कार्यक्रम में गवर्नर के आमंत्रण पर मेरा जाना युक्ति संगत था, मैं गया। फिर वह समय भी तो अब नहीं रहा। हम सरकार का विरोध वैधानिक ढंग से करेंगे। जहाँ सारा विश्व शांति का नारा लगा रहा है। वहां यदि हम १९५० का तरीका अपनाते हैं तो हमको हमारे अन्य पड़ौसी भारत तथा

अन्य राष्ट्रों की सहानुभूति भी तो नहीं मिल सकती। जो नैपाल के आन्दोलनों का आधार स्तम्भ रही हैं।

गवर्नर मधेश, तराई का हमारे समुदाय का था। मेरी उसके प्रति सहानुभूति थी। मैं चाहता इसका शासन सफल हो, इसी में हमारे समुदाय की भलाई है। मैं उसे सफल शासक, इमानदार, न्यायप्रिय, पक्षपात रहित देखना चाहता था। मैं सुनता वह धोखेबाज है। मैं समझता वह कूटनीतिज्ञ है। मुझसे कहा जाता वह रिश्वतखोर है! मुझे ख्याल होता यह सब निम्न स्तर के कर्मचारियों की करामात है। यह भी मालूम होता वह अन्यायी है, पक्षपाती है। अन्याय मुझे लगता जैसे शासकों के लिये कभी-कभी अनिवार्य सा होता है, पक्षपात मानव जनित दौर्बल्य।

पूर्ण वैधानिक ढङ्ग का हमारा संगठन आरम्भ हुआ निर्वाचन क्षेत्र की सभी पंचायतों में हमारे आदमी सफल हुये। हमारे विपक्षी एक जागीरदार के साथ भी स्थानीय गवर्नर की काफी घनिष्टता थी। मैंने सुना कि हमारे संगठन को समाप्त करने के लिये हमारे विरुद्ध षड़यंत्र की तैयारी हो रही है। जिसमें हमारे मित्र गवर्नर कुञ्जबिहारी प्रसाद सिंह का भी हाथ है। मुझे विश्वास नहीं हुआ।

२ दिसम्बर १९५६ को मैं कार्यकारी डी० एम० द्वारा गिरफ्तार किया गया, तब मुझे षडयन्त्र का ज्ञान हुआ। मैं गिरफ्तार करके तौलिहवा जिला जेल भेजा गया।

लगभग ४० गज लम्बी चौड़ी चहार-दिवारी के बीच छः बैरेक जिसमें रोशनदान के नमूने की दो-दो खिड़कियाँ। पचास साठ मिट्टी के बर्तन एक ही जगह रखे थे उसे देखकर मैंने पूछा—ये यहाँ क्यों रखे गये हैं। जबाब मिला बैरेक में पाखाना पेशाब

घर नहीं है। शाम को बन्द होते समय सभी कैदी एक एक मिट्टी का बर्तन रखते हैं, उसी में रात को पेशाब करते हैं पखाना करते हैं। मैंने देखा जेल के अन्दर कोई पखाना नहीं बैरेक के पिछवाड़े सभी बन्दी पखाना करते बदबू चारों तरफ ऊँची दीवारों के अन्दर चौबीस घण्टे फैली रहती।

एक कैदी को मैंने देखा उसके हाथ पैर सूजे हुये थे मैंने पूछा—तुमको क्या कोई बीमारी है ? उत्तर में आँसू गिरा दिये, चार छः आदमियों की एक ही हालत देख कर मुझे कुछ उत्सुकता हुई पता लगाया तो मालूम हुआ रात को बन्द करके रोज पिटाई होती है। मैंने कैदियों से कहा तुम लोग सामूहिक विरोध क्यों नहीं करते ? मालूम हुआ हर बैरेक में सोलह-बीस हाथ की एक लम्बी शहतीर है जिसमें पैर की नाप के सुराख करके बीच से उसे आरे से चीर कर एक सिरे पर कब्जा, दूसरे सिरे पर कुन्जी लगी होती है। उसी में एक पाट उठाकर कैदियों के पैर रखकर ताला बन्द कर दिया जाता है फिर कोई कैदी हिल तक नहीं सकता है। बेड़ी, हथकड़ी उसके ऊपर "काठ मारना" और डन्डे उड़ाना। काठ मारने की प्रथा बरबरता के युग की है। जब कि बन्दियों की रखवाली नहीं होती थी।

जेल पर प्रबन्ध न्याय विभाग का होता है। पहरा पुलिस विभाग का। प्रत्येक कैदी को, मार से बचने, काठ न मारे जाने के लिये दोनों ही विभागों को प्रसन्न रखना पड़ता है। नेपाल में कैदियों को पका-पकाया भोजन नहीं मिलता है। पहले तो केवल तीन आना प्रति दिन के हिसाब से मिलता था; किन्तु अब तीन पाव मोटा चावल भी मिलता है। चौका घर का कोई प्रबन्ध नहीं, जो जहां चाहे खा पका सकता है। जितना नैपाल के कैदियों को मिलता है। उसमें यदि एक-चौके का हिसाब हो

तो भली भाँति निभ सकता है। हमें तो सरकार की बुद्धिमानी पर हँसी आती है। नैपाल को छोड़कर विश्व में कैदियों को नकद देने का कहीं हिसाब नहीं। चावल के अतिरिक्त भोजन के लिये दाल, तरकारी, मसाला, लकड़ी चाहिये जो बाहर ही मिल सकता है। इन सबकी व्यवस्था एक बन्दी किस प्रकार करे ? मजबूर होकर कैदियों को जेल के ही कर्मचारियों से सामान मँगाना पड़ता है। जिसमें उन्हें आधा सामान नहीं मिलता, जिसका नतीजा यह होता है कि उन्हें खाने भर को भी नहीं होता।

बरसाती पानी निकलने का रास्ता जेल में नहीं है। पानी सोख कर फर्शों और दीवारों में सीलन हो जाती है ! नैपाल की सरकार कैदियों को ओढ़ना, बिस्तर या पहनने के कपड़े नहीं देती। दाद, खाज, जूड़ी बुखार, पेचिस आदि बीमारियों से कैदी परेशान रहते हैं, अस्पताल, डाक्टर, औषधि की जेल में कोई व्यवस्था नहीं। जबरदस्त गंदगी कम-अहाता-घेरा जिसमें आदमी दस कदम टहल भी न सके उस पर छः बजे प्रातः कैदी बैरेक से निकाले गये, १० बजे पकाये खाये, फिर बैरेक में ले जाकर" काठ मार दिया" फिर वही ३ बजे से छः बजे तक पकाने खाने की छुट्टी। ऐसी अवस्था में इन्सान की क्या हालत हो सकती है। नैपाल के दण्ड विधान में फाँसी का विधान नहीं है, बल्कि घुला-घुलाकर मारने का विधान है।

आज का विश्व जेल की दीवारों तक को हटाने का प्रयत्न कर रहा है, नैपाल में रात दिन मिलाकर बीस घण्टे कैदियों को बंद रखा जाता है।

अन्य देशों की सरकारें कैदियों को कर्मण्य बनाती हैं, उनके श्रम का सदुपयोग कर उनसे पैदा करवाती हैं, उन्हीं पर खर्च कर

उनको आराम से रखती है। नेपाल की सरकार अकर्मण्य बनाती है। नेपाल में अपराधो की वृद्धि का एक मुख्य कारण यह भी है कि जो कैदी जेल से छूटता है वह चोरी डकैती करने के अलावा और किसी काम का नहीं रहता। फँसे फँसाये लोग जिन्होंने चोरी डकैती का केवल नाम भर सुना था, वे भी नैपाल की जेल से निकले के बाद गिरोह का नेतृत्व करते हैं। सरकार के ऊपर का गुस्सा जनता पर उतारते हैं।

अक्सर लोग साधारण सजा व मामूली अपराध सिद्ध होने पर भी हाजिर होने का प्रयत्न नहीं करते, क्योंकि नैपाल की जेल की अमानुषिक यातनायें जिनको सुनकर ही मनुष्य के रोंगटे खड़े हो जाते हैं, फिर वहाँ पहुँचने पर क्या दशा होगी ?

आज का सभ्य जगत नैपाल की जेल के विषय में यह विश्वास भी करने को तैयार न होगा। इस बीसवीं सदी में नैपाल की जेल में बरबर युग की व्यवस्था की कल्पना भी अन्य देशों की जनता नहीं कर सकती।

११—जेल में खून

एक के सिर पर बाल न होने के कारण दूर से ही मालूम होता था, जैसे कभी इसके सिर पर घातक प्रहार अवश्य किया गया था। जेल में पहुँच कर अपराधियों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन यदि किया जाय तो वहाँ यह पता लगते देर नहीं लगती कि दर असल इसने अपराध किया है या नहीं। सूरत, शक्ल, आहार-व्यवहार, रहन-सहन, बात चीत का यदि सूक्ष्म अध्ययन किया जाय तो अपराध के निराकरण में पूर्ण सफलता मिल सकती है।

क्यों जी, तुम्हारे सर में क्या हुआ था—मैंने हमदर्दी जाहिर करते हुए पूँछा।

देखने से ही वह अपराधी मालूम होता था। मैंने जो देखा वह पहले काफी खुश-मस्त था, किन्तु मेरे पूँछते ही उसने एक लम्बी साँस ली बोला बाबू जी—इसी सिर के रास्ते एक घड़ा खून गिरा होगा। तीन दिन तक बेहोश रहा, मरा नहीं कसर इतनी ही रही! नहीं तो जो हम लोगों ने चाहा था वही होता।

मैंने कहा—आखिर हुआ क्या था?

उसने कहा—बाबू जी भरोसे की गिरफ्तारी जब से हुई है इतनी पिटाई होती है कि हाथ पैर सभी के हमेशा नाकाम रहते हैं। दिन रात ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि वह इतनी ही दया करें, मृत्यु दे दें।

मसल है बाबू जी, मांगे मौत भी नहीं मिलती। हम लोगों ने जान बूझकर मौत बुलाई थी।

बात हमारी समझ में नहीं आई, मैंने कहा—पहेली हमारी समझ में नहीं आ रही है ?

भरोसे का लम्बा कद, चौड़ी छाती, रोबीला चेहरा, उसकी आंखें बतला रही थीं वह कितना बड़ा जफा-कश है। हाथ की हथकड़ी पैरों की बेड़ी खनखनाता हुआ सामने आया, बोला—सुनिये मैं बताता हूँ—शराब के नशे में मुझको घेरा गया, मेरे राय-फल का पिन खराब था, धोखा हुआ, मैं गिरफ्तार कर लिया गया। गिरफ्तार तो मुझे कर लिया गया, किन्तु मुझे रख पाना अधिकारियों के लिये दूभर जान पड़ता था। उसने कहा—मैं अपनी खुशी से थाने तक आया, मुझे अपने ऊपर गुस्सा था, मैंने शराब पी थी, गलती मेरी थी। मुझे लगातार सात-आठ दिन तक बड़ी ही निर्दयता के साथ पीटा गया। यद्यपि मैंने अपना अपराध स्वीकार कर लिया था, फिर भी मेरे ऊपर मार पड़ती थी, इसलिये कि मैं अधिकारियों के कथनानुसार व्यक्तियों को अपना साथी तथा आश्रयदाता एवं प्रेरक नहीं बतला रहा। था। मैंने साफ इन्कार किया, जिसकी मैंने शक्ल नहीं देखी जानता नहीं, मैं स्वयं नहीं कह सकता आप लोग जो चाहे करें।

उसने कहा—बाबू जी मैं जेल में आया बिलकुल अध-मरा था, फिर भी मुझे हँसी आ रही थी अधिकारियों की हिम्मत पर। हमारे हाथ में हथकड़ी पैर में बेड़ी, बीस घण्टा काठ में बन्द, फिर भी लोग डरते थे, कहीं मैं भाग न जाऊँ ?

भरोसे ने कहा—बाबू जी जब यातनाओं की हद हो गई तो, मैं जीवन से ऊब गया। घुल घुल कर मरने से सीने में गोली खाकर मरने का एक मात्र यत्न यही था कि मैं जेल से भागूँ,

निकल गया तो जेल से मुक्ति नहीं, नारकीय जीवन से मुक्ति मिल ही जायगी। बोला—एक बीड़ी, एक टुकड़ा सुपारी पर खुश होने वाले, इन जेल कर्मचारियों को हमारे घर वालों ने खूब पिलाया खिलाया। तीन पाव चावल, तीन आना पैसा के अतिरिक्त अन्य सामग्रियों तथा लकड़ी ईंधन की आवश्यकता होती है। जेल से बाहर निकलकर लकड़ी हम कैदी ही चीरते हैं, चाहे वह कैदियों के लिये हो या जेल के कर्मचारियों के। यह उच्च अधिकारियों का हुक्म था, कि एक एक करके कैदियों से ही लकड़ी फटवाई जायें।

उसने बताया, बाबू जी, पहरा छोड़कर सभी के सभी अधिकारी बाहर जुआ खेलने में मस्त थे। जेल के नायक ने एक बारगी पाँच कैदियों को लकड़ी फाड़ने के लिये बाहर निकाला। हम लोगों ने यह तय कर लिया कि आज का मौका चूक गये तो ठीक नहीं, सबसे पहले हमारा भाई गया। उसने संतरी को ठोकर दी, रायफल उसके हाथ से नीचे गिर गई। मैंने झटका देखकर फाटक तोड़ दिया, पाँच बाहर थे ही, कुछ भीतर से भी निकले। हम लोग समझते थे संतरी की रायफल भरी मिलेगी, धोखा हुआ, वह भरी हुई नहीं थी। मैगजिन के पास हम लोग जब तक बढ़े कर्मचारियों ने आकर घेर लिया, हम सभी लोगों के पैरों में बेड़ियाँ थीं, सभी काबू में कर लिये गये। असहाय हम लोग पुनः जेल के भीतर चले गये।

हम लोग समझते थे, शायद जेल से भागने के प्रयत्न के अपराध में हम लोगों की कुछ सजा और बढ़ जायगी, मुकदमा चलेगा। किन्तु एकाएक क्या देखता हूँकि चार सशस्त्र तथा चार डन्डाधारी पुलिस के सिपाही आये, हमें पहले तो काठ में बन्द किया, जब हम लोग हिल भी नहीं सकते थे, डन्डे बरसाने आरम्भ कर

दिये। लगभग तीन घण्टे तक हाय मर गया, हाय मर गया की आवाज जेल खाने में गूँजती रही। एक जोर की आवाज आई, हाय"" म"" र""ग""या। मेरे भी इतनी चोट आ गई थी कि अर्ध चेतन अवस्था में था। किसी सिपाही ने मेरे भाई का नाम लेकर कहा—साला मर गया। भाई के मरने की आवाज सुन कर मैं चीख पड़ा—तभी एक सिपाही ने, साले तू भी उसी के साथ जा, कहकर मुझे डण्डे लगाना शुरू कर दिया मैं बेहोश हो गया।

दूसरे दिन प्रातः मुझे होश हुआ,देखा सारा बैरेक खून से तर है। यह पता लगाना मुश्किल था कि इसमें कौन जिन्दा है, कौन मर चुका। जो मर गया उसकी तो मुक्ति हो गई जो जिन्दा था वह सोच रहा था अभी देखो इस जिन्दगी में क्या क्या बदा है। मुझे भाई के मरने का अफसोस उतना नहीं था जितना अपने जिन्दा रहने का। मैंने करबट बदली देखा जेल अधिकारी सामने खड़े आपस में मसविरा कर रहे थे, अब क्या होना चाहिये ? एक ने कहा—सामने दीवार के सहारे खड़ा करके सीने में गोली मार दी जाय फिर यही बयान हो कि भागते वक्त गोली का शिकार हुआ। सशस्त्र पुलिस के हवलदार ने कहा—आबाद रहें हमारे बड़े हाकिम, एक कारतूस का क्यों नुकसान करोगे, बयान यही लिखा जायगा।

जेल के बाहर इस बात को खूब फैलाया गया कि जेल से भागते हुए कैदियों पर जेल रक्षकों ने जो गोली चलाई उसमें एक घटना स्थल पर ही मर गया, कई एक घायल हैं। जेल पर डाक्टर भी आये किन्तु मरहम पट्टी के लिये नहीं बल्कि यह देखने कितने मरे कितने घायल हैं। पाँच की हालत डाक्टर ने चिन्ता-जनक बतलाई किन्तु दवा करके उन्हें बचाने का प्रयत्न नहीं

किया, बल्कि वे अपने भाग्य कहिये या दुर्भाग्य से बच गये।

जिले के सभी मुख्य अधिकारी आये उनके आने के पहले ही डन्डा दिखाते हुये हवलदार ने कहा—देखो लिखा तो वही जायगा जिससे हमारी बचत हो, यह तय है, फिर भी यदि तुम लोगों ने एक भी शब्द हमारे लोगों के विरुद्ध निकाला तो हड्डी पसली तोड़ दी जायेंगी। जेल के कर्मचारियों ने हम लोगों को इकट्ठा करके पूरा बयान सुना दिया; जिसको कि हम लोगों को देना था। जेल के अधिकारियों ने जब यह कहा—कि अब सब ठीक है तभी अधिकारी वर्ग आया। भरोसे ने कहा—बाबू जी अधिकारी वर्ग इतना प्रसन्न दिखाई देता था मानों उसके सिपाहियों ने कौनसी गढ़ विजय कर ली ?

इस घटना के पूर्व जेल के सारे के सारे कैदी मये शस्त्रास्त्र के दिन दहाड़े इसी तरह भाग निकले थे तब कहाँ गई थी इनकी बहादुरी ? चार ही छः फायर कैदियों ने की थीं, सभी के रायफल छूटकर हाथ से जमीन पर आ गये थे। हाँ, उस समय पूर्व निश्चित योजनानुसार सभी ने काम किया, कामयाब रहे। इस बार, कुछ कमजोर जो थे भीतर ही रह गये। तमक कर भरोसे ने कहा—बाबू जी किस्मत की बात है, संतरी की बन्दूक भरी हुई होती तो सबको मैं छलनी बना देता।

मैंने देखा रह रह कर वह उग्र हो जाता था और बात का सिलसिला छोड़ देता था।

मैंने कहा—हाँ तो फिर अधिकारियों ने आकर क्या किया।

भरोसे ने कहा—करते क्या आते ही पूँछा—क्या यह सच है कि तुम लोग जेल से भाग रहे थे ?

सभी ने एक साथ स्वीकार किया।

फिर प्रश्न हुआ कि—क्या भरोसे के भाई को भागते समय

ही गोली मारी गई है ?

भरोसे ने कहा—सभी बन्दी मौन हो गये।

अधिकारियों ने कहा—द्वारिका को ले जाकर अलग पूँछो। द्वारिका के बारे में भरोसे ने बतलाया कि यह राणा शासनकाल में सी० आई० डी० का काम करता था। तथा उसी समय में इसने न्याय विभाग के लोअर अपर कोर्ट के दोनों न्यायाधीशों को रंगे हाथ रिश्वत लेने के अपराध में गिरफ्तार किया था। एक पहाड़ी अधिकारी दूसरे पहाड़ी अधिकारी के अपमान का बदला बिना लिये नहीं रहता। फिर इसने तो गिरफ्तार करके जूतों से पीटा था,दोनों ही न्यायाधीशों की नौकरी पर बीती थी।

भरोसे ने बतलाया मौका पाकर द्वारिका महतो को स्थानीय अधिकारियों ने फांस कर, मार मार कर डकैती साबित करवा ली और उन्नीस साल की सजा उनको लोअर कोर्ट यानी अमीनी से हुई। लाख उन्होंने अधिकारियों के साथ अपनी दुश्मनी दिखाई पर एक भी नहीं सुनी गई।

हाँ तो द्वारिका महतो को आश्वासन दिया गया कि तुम्हारा मुकदमा अपील में है, हम लोग तुमको रिहा करा देंगे, तुम सभी से कहलवा दो कि इसमें रक्षकों का कोई दोष नहीं है, कैदियों ने भागने का प्रयत्न किया तभी रक्षक गोली चलाने को वाध्य हुए। यह भी कहो कि भरोसे का भाई भागते वक्त ही मारा गया है।

द्वारिका महतो बाहर निकले अधिकारियों ने जितने भी प्रश्न द्वारिका से किये उन्होंने सभी का उत्तर माफिक ही दिया। उन्हीं के बयान पर जितने बन्दी थे यह लिखकर कि हम सभी द्वारिका महतो के बयान से सहमत हैं दस्तखत करने को कहा-गया। डन्डे के बल पर सभी जिला अधिकारियों ने मिलकर

सभी से अँगूठा निशान लिये व दस्तखत करवा लिये।

जेल कर्मचारियों का बयान आरम्भ हुआ। हम लोग यह समझते थे कि यह प्रश्न अवश्य होगा कि जब एक एक करके कैदियों को निकालने का हुक्म था, तो एक साथ पांच कैदी क्यों निकाले गये? निश्चय ही यदि एक साथ पांच कैदी न निकाले जाते या रक्षक सतर्क रहते तो भागने का कोई प्रश्न ही नहीं होता। बन्दियों का भागने का प्रयत्न करना स्वाभाविक है। फिर नैपाल की जेल में जहां कैदियों के साथ सोलहवीं सदी का पशुवत व्यवहार होता हो, भागने का मौका पाकर कौन रुक सकता है।

भरोसे रोने लगा, कहा—सुरक्षा बाबू हम लोगों के बयान सिद्ध करते हुए ही, रक्षकों के बयान लिख, अधिकारियों ने सिपाहियों से दस्तखत करा लिये उनसे कुछ भी नहीं पूँछा गया। एक लम्बी साँस लेकर भरोसे ने कहा—जब मेड़ ही खेत खाये तो फसल कैसे बचाई जा सकती है। यहाँ तो जितने भी अन्याय होते हैं एक सिपाही से लेकर पूरे जिले के न्याय तथा शासन विभाग के सभी अधिकारी उसमें शामिल होते हैं।

यद्यपि जेल में इस तरह पीट पीटकर मारने वाला खून करने का अपराधी था फिर भी इस खून को जिले के अधिकारियों ने दबाया तथा जो रूप इस घटना को दिया गया उसमें अधिकारियों की धूर्त्तता एवं मक्कारी के सिवा कुछ नहीं था। न्याय तो यह था कि सभी कैदियों की मेडिकल जाँच कराई जाती, सभी को सच सच बयान करने को स्वतन्त्र किया जाता। जहाँ न्याय यह कहता है कि फाँसी की सजा पाये हुए व्यक्ति को भी यदि कोई व्यक्ति क़त्ल करदे तो उसे भी फाँसी की ही सजा होती है। तो क्या एक कैदी को जेल में बन्द करके पीट-पीट कर मारना खून नहीं तो क्या है।

१२—साला मदद नहीं देता

जिस पद्धति के अनुसार नैपाल के अन्दर राणाओं ने शासन किया उससे नैपाल की जनताकी खुशहाली पर बुरा असर पड़ा। जमींदारों को, राणा सरकार को प्रसन्न रखकर आसामियों पर हर किस्म के जुल्म करने की पूरी-पूरी छूट थी। जमींदार आसामी से इतना लगान लेता था कि लगान अदा करने के बाद मुश्किल से आसामी को कुछ महीनों का खर्च बाकी बचता। दिन रात की बेगारी, बेचारे मजदूरी भी तो नहीं कर सकते थे, दूसरी आय असामियों की होती थी गाय-भैंस पालकर, घी, दूध, दही और बछड़े, भैंसे बेचकर। असामियों के घर जब गायें, भैंसें हों तो फिर जमींदार को क्या पड़ी है जो कि वह गाय, भैंस पालने की तबालत उठाये? जमींदार तो केवल हुक्म का दरिद्र होता था, हुक्म हुआ फिर उसे किस चीज की कमी। यों तो जब भी हुक्म हो आसामी को उसका पालन करना होता था, किन्तु होली, दीवाली, दशहरे से एक मास पूर्व ही नियमानुसार सामान इकट्ठा करके जमींदार के घर असामी को पहुँचाना होता था, गरीब असामियों के लिये होली, दीवाली, दशहरा क्या।

बैलों की आवश्यकता जमींदार को हुई तो फिर बँधका लिये गये असामियों के बछड़े। आसामी की क्या हिम्मत जो दाम कहे, जो कुछ मिल जाय उसके लिये वही बहुत है। बकरे की आवश्यकता हुई पकड़कर आ गये कीमत नजराने में मुजरा

हो गया। ऊपर कही गई बातों को दुहराना कुछ अच्छा नहीं लगता, बस, यही समझ ले कि जमीनदारों से कहीं अधिक मात्रा में ये चीजें सरकारी कर्मचारियों को, असामियों को देना होता था। डबल शोषण, एक अगर खटमल तो दूसरा जोंक।

जमीनदारशाही और नौकरशाही, जब इस चक्की के दो पाट में जनता पीसी जा रही थी और उसे आह करने की भी इजाजत नहीं थी, नैपाल प्रजा परिषद् के नेता आचार्य टंक प्रसाद ने शोषण मुक्त समाज की रचना कर, समाज की प्रचलित दासता, विषमता और असहिष्णुता को दूर कर स्वतंत्रता, समता और भ्रातृभाव के आदर्श की स्थापना का व्रत लिया। देश के चार नौजवानों ने अपने खून से नैपाल में राजनैतिक आन्दोलन की नींव डाली।

१९५० की क्रांति के बाद जनता का उत्पीड़न अवश्य कुछ कम हुआ। कहावत है "जाति स्वभाव न छूटे....." वही जमीनदार, वही सरकारी अफसर, यह भी कह सकते हैं कि वही असामी, जिससे कभी उक्त दोनों जातियों ने सीधे मुँह बात भी नहीं की, बाबू, भैय्या कहना दूर रहे सीधे नाम लेकर ही बुलाया, खुश हो गये।

जब बेगार बन्दी का एलान सरकार ने किया तो जमीनदारों के हाथ पैर ढीले हो गये फिर भी साहस नहीं छोड़ा। जो जिस काम को करता है उसके लिये उसे तमाम रास्ते मालूम रहते हैं, अपनी हुकुमत को कायम रखने के लिये पैसों के बल पर पहले पंच हो गये फिर बेगार को मदद के नाम से संबोधित किया। अब्बल तो रिश्वत ही में एक के दस पैसे निकल आये जो पंचायत के चुनाव में खर्च किया या फिर कारिन्दा को नाम दिया पंचायत सेक्रेटरी का, खिदमतगार को चपरासी, साल व साल

इतना मुनाफा ही क्या कम है ? जमीनदार साहब पंच साहब हो गये तब भी शासक अब भी शासक, असामी तब भी शासित था अब भी शासित है, उसकी दशा में कोई परिवर्तन न आया।

१९५० की क्रांति के बाद जब मैं जेल तोड़ कर भैरहवा से भगा तो लगभग ५ साल तक फरार रहा। शाही घोषणा के बाद जब मैं घर पहुँचा तो मुझमें एक बहुत बड़ी तबदीली आई वह यह थी कि पहले तो मैं शोषक वर्ग के प्रति बड़ा ही कटु, अनुदार, असहिष्णु रहता था किन्तु अब वे बातें लगभग खत्म हो गई थीं। लोग मेरे लिये यही कहने लग गये थे, कि मैं अब व्यवहारिकता की ध्यान में रखते हुये ही कोई काम करता हूँ। यद्यपि हमारे यहाँ के एक बहुत बड़े जमीनदार की हमारी पुस्तैनी तनातनी रही फिर भी बुजुर्गों के व्यवहार में कोई कमी नहीं रहती थी, वैसे अपने अपने दाव में सभी होशियार रहते। बुजुर्गवार मेरे भी प्राइमरी के स्नातक थे जमीनदार के भी। फिर जब वे लोग निभाते थे तो फिर हम लोग पढ़ लिख कर भी ऐसा न निभाये तो यह कितनी भद्दी बात है।

नागिन को देखकर आदमी सहम जाता है लेकिन मैंने देखा है सपेरे उसे मुँह में रख लेते हैं, जान लेने वाली नागिन जीविका चलाती है, तरकीब से।

जमीनदार के लड़के काफी पढ़े लिखे थे, कुछ तो उच्चतरता की भावना (superiorty-complex) में जल रहे थे, जो इस समानता के युग में सहज बेवकूफी मानी जाती है। किन्तु बड़ा भोला-भाला था, उसने हाथ मिलाया, मैं गले मिल गया। दोनों की बैठक रात दस-दस बजे तक होने लगी। नौ-दस साल बाद मैं घर आया था, उस बीच की घटी घटनाओं के विषय में जो जानकारी मुझे उससे हो सकती थी दूसरे से नहीं, वह पढ़ा

लिखा था, यही कारण था कि अपने राम को उससे बातें करने में अधिक आनन्द आता था।

अगहन का महीना था, शाम को लगभग ८ बजे हम लोग चाय की चुस्की ले रहे थे, बातें पूर्ण प्रगतिवादी हमारी-उसकी हो रही थीं। बेचारा वह मुझे यह समझाने की पूर्ण कोशिश कर रहा था कि हमने अपने असामियों की बेदखली बिल्कुल बन्द कर दी है, हल वालों के कर्ज माफ कर दिये हैं, पिता जी का कारिन्दों को आदेश है कि उनका व्यवहार आसामियों के साथ बहुत ही शिष्ट एवं औदार्य पूर्ण होना चाहिये।

जिस तरह नक़ली माल बेचने वालों का नमूने पर पालिस असल होता है, उदाहरण भी एक आध पेश किये। मैंने उसको समय के साथ अपने को बदल देने की दाद दी। मैंने कहा—मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि तुम्हारे पिता ऐसे (Feudalish) सामन्तवादी व्यक्ति में इतना बड़ा परिवर्तन आ गया जो भारत में उठते हुए (Seafdom) कृषक दासता की बातों को सुनकर ठन्डी साँस लेते थे। आश्चर्य जनक परिवर्तन ?

बीच ही में उसने रोककर कहा—जी नहीं पहिले उनकी जैसी भी भावनाएँ रही हों किन्तु अब तो वे बहुत बड़े सुधारवादी हो गये हैं। बेगार के तो सख्त खिलाफ हो गये हैं।

मैं कुछ और कहने ही जा रहा था तभी एक आदमी कुछ सिकुड़ा सा आकर खड़ा हो गया।

मैंने पूँछा—क्या चाहते हो ?

उसने कहा—सरकार से कुछ अर्ज, करनी है।

मैंने कहा—कहो भाई, वे सुन रहे हैं।

उसने कहा—आज भर की छुट्टी चाहता हूँ।

जब तक कि वे कुछ और कहें तुम्हें छुट्टी मिलेगी या नहीं। तुनक कर एक सिपाही सामने आया बोला—सरकार चार-पाँच रोज से मैं बराबर जाता हूँ। शाम ही को कह देता हूँ कि तुम्हें सीर को मदद देना है बातें बनाता है "साला मदद नहीं देता।"

उसी दिन मुझे मालूम हुआ कि बेगार का दूसरा नाम मदद है।

जमीनदार के लड़के के चेहरे पर हवाइयाँ उड़ने लगीं, अभी उसने अपने पिता की प्रसंशा में यह कहा था कि वे बेगार के सख्त खिलाफ हैं दस मिनट भी नहीं बीते होंगे कि उसी आदमी के सामने जिससे तारीफ की गई थी, यह आवाज "साला मदद नहीं देता।"

१३—मेरे आचरण पर शक

घटना सन् १९५३ की है परिस्थिति वश मुझे जून के ही महीने में जब लोग काश्मीर की घाटी में अपनी तपन बुझाने को जाते हैं। मुझे काश्मीर की अलभ्य सुषुमा से अलग होकर बरेली आना पड़ा। एक दम ठण्डी जगह से एकदम गर्म जगह पहुँच जाने की ही शायद यह प्रतिक्रिया हुई मुझे स्नायु पीड़ा का शिकार होना पड़ा। न चाह कर भी मैं बरेली जिला अस्पताल में भर्ती हुआ। कर्त्तव्यवश नर्स को छोड़कर कौन ऐसा था जिसको मुझसे सहानुभूति होती। अन्य मरीजों की घरवालियाँ आतीं। कई रोज बीत गये एक दिन नर्स ने पूछा—मिस्टर शुक्ला (शर्मा न बतला कर मैंने शुक्ल बताया था) आपकी धर्मपत्नी आपको देखने तक नहीं आईं, क्या बात है ?

१९५० की क्रांति के बाद जब नैपाल नरेश दिल्ली से लौटे उसके बाद भी भैरहवा पर आक्रमण करने का अभियोग मुझ पर था, शाहीबागी, मेरे साथ पत्नी के रहने का सवाल ही क्या था फिर भी जबाब तो मुझे कुछ न कुछ देना ही था मैंने कहा—अभी मैंने अपनी शादी नहीं की है।

शादी करने की सलाह नर्स ने तो मुझे दी किन्तु कुछ खास दिलचस्पी जब मैंने नहीं ली तो वह खामोश हो गई।

भूमिगत जीवन के लिये एकान्तवास, कम बोलना, कम मिलना-जुलना अत्यन्त आवश्यक होता है। मेरा यह व्यवहार

लोगों के संदेह का कारण हो सकता था, यदि मैं अपने को एक दार्शनिक के रूप में लोगों के समक्ष न रखता, जिसमें कि ये सारी अलामतें पाई जाती हैं। अस्पताल में भी मैं हर तरफ से उदासीनता ही दिखाता। स्त्री जाति जान बूझ कर कभी भी पुरुष की तरफ नहीं देखती जबकि ठीक इसके विपरीत पुरुष का स्वभाव होता है। मेरा अनुमान है स्त्री जाति का यह गुण जिसे हम लज्जा की संज्ञा देते हैं पुरुषों को आकर्षित करता है। यह बतलाना तो बहुत मुश्किल है कि किन किन गुणों से स्त्री जाति पुरुष पर आकर्षित होती है फिर भी मेरा ख्याल है यदि पुरुष स्त्री जाति के समान ही व्यर्थ की ताका-झाँकी छोड़ दे तो वह स्त्री के लिये और श्रद्धा का पात्र हो सकता है। जो व्यक्ति जितना ही अधिक अपने आचरण पर सफाई देता है मुझे उतना ही उसके आचरण पर शक होता है, परिस्थितिवश ही शायद मैं अपने आचरण को शुद्ध रखे था, आखिर एक बागी को शरण कोई देता भी तो कैसे ?

स्नायु पीड़ा एक दिन असह्य हो गई, जिस बात पर मैंने कभी गौर भी नहीं किया था, एकाएक मैंने वार्ड कुली से लिफाफा मंगाकर अपने सम्बन्धी को लिखा कि गुप्त रूप से मेरी धर्मपत्नी को बरेली लेकर आइये, मैं बीमार हूँ।

मैं अस्पताल से छुट्टी पाकर अपने आश्रयदाता श्री गिरजा शंकर शुक्ल के यहाँ पहुँचा। मुझे याद भी नहीं था कि मैंने किसी को बुलाया भी है। पता मैंने एक दूसरे ही मौहल्ले का दिया था। एक दिन दोपहर के १२ बजे मेरे बुजुर्ग मास्टर जगन्नाथ प्रसाद ने आकर बताया कि एक महिला जिसके साथ दो छोटी-छोटी लड़कियाँ भी हैं, आई हुई हैं। उनको आपकी तलाश है। संदेह तो उनको हो गया था, किन्तु आश्चर्य था कि उनको

मेरा पता कैसे लगा, मेरे बताने पर उनको तसल्ली हुई। मैं यह संदेह वहाँ किसी को नहीं होने देना चाहता था, कि ये महिला रुहेली नहीं है। हमारे यहाँ विवाह के बाद गोदना गोदाने की प्रथा स्त्रियों में है। बिछुवे से ही रुहेलखण्ड की औरतों के विधवा-सधवा होने की पहिचान होती है, गोदने की प्रथा वहाँ बिलकुल अनिवार्य नहीं है। मुझसे सहानुभूति रखने वालों ने यह राय दी कि यहाँ की औरतों से उनको अलग रखना ही बुद्धिमानी होगी नहीं तो आपके गुप्तवास का राज खुल जायगा।

एक जोड़ा बिछुआ तथा पूरे आस्तीन का ब्लाऊज पहिनने का निर्देश मैंने अपनी धर्मपत्नी को दिया स्वयं एक मित्र के मकान की सफाई में डट गया। बरेली में मुझसे सहानुभूति रखने वालों की कमी नहीं थी। अबिलम्ब एक छोटी मोटी गृहस्थी को चलाने भर के लिये सारा सामान आ गया। रात को मैंने यहां की प्रथा के बारे में बतलाया, मुझको अपनी पत्नी को, अपने से भी गुप्त रखना था। हमारे देश में रुहेलखण्ड की अपेक्षा पर्दे की प्रथा अधिक है, मैंने उनसे इसका भी जिक्र किया, बहुत देर तक बातें होती रहीं, अपने जीवन के प्रथम चरण में ही मैंने सरकार से बग़ावत की थी पारिवारिक सुख का कटु या मधुर किसी प्रकार का अनुभव मैं न कर सका था। मुझ जैसे आवारा के हृदय ने भी यह स्वीकार किया कि संसार में कोई भी मनुष्य परिवार के बिना सुखी नहीं रह सकता, मानव जीवन की रचना ही इस प्रकार से हुई है कि अकेले रहने से जीवन अधूरा या सूना-सूना जान पड़ता है। आज वर्षों बाद जब मैंने अपने को पत्नी तथा पुत्रियों के बीच पाया तो मेरे मुँह से निकल पड़ा—

"दह्यमाना मनोदुःखैर्व्याधि मिश्चयातुरा नराः।
ह्लादन्ते स्वेषु दारेषु धर्माताः सलिलेष्विव ॥" आदि पर्व

महामुनि व्यास ने कहा है—कि मानसिक दुःखों से जलते हुए और शारीरिक रोगों से पीड़ित मनुष्य भी अपने स्त्री-बच्चों में जाकर इस प्रकार शान्ति प्राप्त करता है, जैसे धूप में व्याकुल मनुष्य जल-प्रवाह में पड़कर।

यद्यपि बरेली में मुझसे सहानुभूति रखने वालों की कमी नहीं थी। दस साल के अपने क्रांतिकारी जीवन में मैंने कभी भी एकाकीपन का अनुभव नहीं किया था, किन्तु इस बार बीमारी के बाद मैं एकाकीपन भी अनुभव करने लगा था। जीवन नीरस एवं भार स्वरूप हो रहा था हृदय के सरस भावों को, व्यक्त करने के लिये मेरा मन व्याकुल हो रहा था। ऐसे समय में स्त्री-बच्चों को पाकर मैं शारीरिक और मानसिक स्वस्थता का अनुभव करने लगा।

आज से नौ दस वर्ष पूर्व जब हम दोनों में अल्हड़ जवानी थी, उसी मस्ती के आलम में क्षणिक आवेश में पड़कर नैपाल की राणा सरकार से बगावत की थी, जो आगे चलकर स्थायी हुई। निरन्तर नौ-दस साल के मेरे वियोग से नारायणी (मेरी धर्म पत्नी) का शरीर जर्जर हो गया, समय से पूर्व ही बुढ़ापे ने आ घेरा था। मैंने देखा उनकी सहज स्वाभाविक मुस्कान खो गई है, आखों में छाया गहरी हो गई है, क्षीण काय। मैंने पूछा—क्या तुम बीमार थीं।

उनकी आँखें भीग गयीं, बोली बीमारी जो थी अब भाग जायगी।

बात सीधी थी, हमारी समझ में आ गई।

सारी रात हम दोनों ने जागते ही बिता दी। नित्य क्रिया से निबट कर जब मैं अपने आश्रय दाता के आवास पर गया, तो उस घर की स्त्रियों ने रात को न आने का कारण पूँछा।

मैंने कहा—हमारे मित्र शर्मा की धर्मपत्नी यहाँ रह कर दवा करा रही हैं, उनकी देख-रेख के लिये मैं वहीं था। हमारी आँखें बतला रही थीं कि मैं रात भर जगा हूँ, फिर भी किसी ने कुछ भी सवाल नहीं किया, शायद इसीलिए कि हमारे आचरण पर किसी को शंका की गुञ्जाइश नहीं थी।

लौंद यानी मलमास का महीना चल रहा था, सोम या शुक्र का दिन था, बरेली के प्रसिद्ध स्थान अलखनाथन की ओर सज-धज कर महिलायें शिव पूजन को जा रही थीं, मेरी धर्मपत्नी भी बहुत ही धार्मिक प्रवृत्ति की महिला हैं। उन्होंने आग्रह किया कि हम लोग शिव पूजन को चलें, मैंने हाँ कर दिया।

नहा-धो, कपड़े बदल कर, एक टोकरी में धूप-दीप, अक्षत-विल्वपत्र रख नौकर को थमा दिये। टीपिकल रुहेलखण्डी घूँघट में मुँह छिपाये मेरी धर्मपत्नी अलखनाथन को चलीं। मैं कुछ फासले पर था पीछे-पीछे नौकर के साथ वे आ रही थीं, कभी-कभी मैं मुड़कर पीछे देख लेता था, जैसे कि स्वाभाविक भी था। मैंने उनसे कह रखा था कि यदि किसी जान पहिचान के आदमी के मिलने पर मैं रुकूँ तो तुम मत रुकना रास्ते के मौहल्ले वालों को मैं यह नहीं मालूम होने देना चाहता था, कि ये हमारे साथ हैं।

अचानक मेरी नज़र एक लड़के के ऊपर पड़ी, जो उसी मौहल्ले में रहता था जहाँ हमारा आश्रय था। लड़का कुछ मसखरे किस्म का था उसकी आदत थी वह बुड्ढों तक से मज़ाक करने से बाज नहीं आता था। बोला—वाह भाई साहब, तजवीज़ तो आपकी बहुत अच्छी रही, अब चले जाइये अलखनाथन तक, उनकी कृपा होगी तो हत्थे चढ़ जायगी! कुछ थोड़ी सी सफाई देकर मैं चलता बना।

मन्दिर के सामने पहुँचकर जिस दूकान से प्रसाद खरीदा, वहीं हम लोगों ने अपने चप्पल जूते उतारे, हाथ पैर धोकर साथ-साथ पूजन किया। चलते समय बाहर गेट पर हमारे बुजुर्ग श्री पं० जगन्नाथ प्रसाद सपत्नीक मिल गये। हम लोग उनके आग्रह को न टाल सके। सायं तक उन्हीं के यहां रहे। आठ बजे शाम को जब पं० जी के यहां से लौटे तो उसी मौहल्ले से गुजरे जहां हमारा पूर्व आश्रय था। मैं कहाँ रहता था; यह देखने के लिये मेरी पत्नी बहुत ही उत्सुक थी। बाबू गिरजा शंकर शुक्ल का मकान एक गली में पड़ता था, उनके मकान की बैठक से लगे एक कमरे में मैं रहता था। जिधर औरतों का आना जाना कम होता था। मुझे सूझी, क्यों न उसी गली से होकर निकलें। निदान मैंने वैसा ही किया। कमरे की चाबी मेरे पास थी, मैंने कमरा खोला, एक चारपाई, एक कुर्सी, एक मेज पर पढ़ने लिखने के सभी सामान ठीक से, सजाये हुये रखे थे। मेज पर पड़े लैम्प को जलाने की मूर्खता मुझसे हो गई, अचानक बाबू जी की द्वितीय पत्नी बाहर निकल पड़ीं। एकान्त कमरे में एक सर्वाङ्गीण सुन्दरी के साथ देखकर खुद शर्मा सी गईं और उल्टे पाँव घर में घुस गईं। अब मुझे अपनी भूल मालूम हुई, मैं चलने की तैयारी कर ही रहा था कि उनकी प्रथम पत्नी भी आ पहुँची, मुझे कुछ न सूझा मैंने लैम्प बुझाकर बाहर से ताला लगा दिया। दोनों ही माता तुल्य बेचारी क्या कहतीं। दस मिनट तक इधर-उधर की बातें करता रहा, जब वे भीतर को चली गयीं मैंने ताला खोला और उनको लेकर चल दिया। मुझे तो चिन्ता थी कि माताओं को मुझ पर शक हुआ होगा, किन्तु मेरी धर्मपत्नी सोच-सोच कर खूब हँसी।

दूसरे दिन मैं १० बजे पत्नी के पास से कुछ सामान लेने बाबू जी के घर आया, दरवाजे पर कदम रखा ही था कि मुझे

अपना वही फर्जी नाम सुनाई दिया, मैं ठिठका। बाबू जी के द्वितीय पुत्र से एक स्त्री बातें कर रही थी, जो रिस्ते में उसकी भाभी लगती थी।

मैंने सुना वह आश्चर्य प्रकट करते हुये कह रही थी—हाय राम, सुना छुटन्नी, भाई साहब आज एक औरत को लेकर अलखनाथन गये थे ?

छुटन्नी ने कहा—वे उनके मित्र शर्मा की बीबी हैं ?

"अरे वाह—कोई औरत अपने पति के मित्र को डाट-डाट कर फूल अक्षत देकर पूजा करवायेगी। फिर ऐसा व्यवहार तो कोई पति अपनी पत्नी के साथ ही कर सकता है। उसने कहा—भाई साहब ने दूकान के तख्त के नीचे से चप्पल उठाकर उस ओरत के सामने रखा।

बातें सभी सच थीं, फिर इन लोगों की शंका भी तो निर्मूल नहीं थी जबकि इन लोगों को हमारे विषय में कोई ज्ञान न था।

बाबू जी की पत्नी ने कहा—उसको रहते यहाँ दो वर्ष हुये, किसी भी स्त्री की तरफ आँख उठाकर देखा तक नहीं। किन्तु तुमसे जो सुन रही हूँ, अपनी आँखों जो देखा, उससे तो साफ़ जाहिर है कि.....।

१४—शहीद शमशुल

१९१९ में जालियाँवाला बाग की ज्योति अमृतसर में आजादी के परवानों ने अपने खून और आँसुओं से जलाई थी। जिसमें माताओं ने अपने बेटे, बहनों ने अपने भाई, और सुहागनों ने अपने सुहाग आजादी की भेंट कर दिये। आजादी की देवी प्रसन्न हुई १९४७ में वरदान स्वरूप भारत स्वतन्त्र हुआ।

दस गज के फासले पर स्वतन्त्रता को देख नैपाल अपना धैर्य खो बैठा चार साल भी पूरे नहीं हो पाये थे कि उसने राणा सरकार को चुनौती दी। १९५० में नैपाल के राणा के विरुद्ध सशस्त्र क्रांति ने सौ साल से भी अधिक पुरानी हुकुमत की बुनियाद को खोद फेंका।

साइमन कमीशन भारत आया, और उसका "लौट जावो" के नारों से समस्त भारत में बायकाट किया गया। पंजाब में लाला लाजपतराय ने छाती खोलकर इसका विरोध किया। एक विशाल जुलूस में लाला लाजपतराय पुलिस की लाठियों से बुरी तरह घायल हुये, जिसके परिणाम स्वरूप उनकी मृत्यु हुई, कौन नहीं जानता ?

किन्तु ऐसे भी शहीद हैं कि जिनके भाषणों पर न तालियों की गड़गड़ाहट हुई, न जिनके नाम मोटे अक्षरों से समाचार पत्रों के पन्नों में छपे, ना ही उनके गले में फूलों की मालायें पड़ीं, फिर भी

यह मुक्त कण्ठ से कहा जा सकता है कि उन्हीं के मूक बलिदानों ने भारत आजाद किया।

एक बार मैंने एक सिविल सर्जन द्वारा लिखे गये एक लेख में पढ़ा था कि जब उसने एक मरते हुए क्रांतिकारी से पूँछा—ओ, भारत माँ के सपूत—तुम अपना पता तो बता दो—उत्तर मिला—मैं नहीं चाहता कि मेरी शहादत की कोई तारीफ़ करे, मैं नहीं चाहता कि मेरी इस मृत्यु की खबर किसी को मिले, मैं नहीं चाहता कि कोई मेरे लिये रोये। मुझे शांति पूर्वक मरने दीजिये।

नैपाल में भी ऐसे अनगिनत शहीद हुए हैं, जिनका आज कोई नाम-काम कुछ नहीं जानता। उन्हीं में से एक है, शहीद शमशुल। जिनकी शहादत की कहानी का पता मुझे अपने मित्र श्री दलबहादुर वकील से चला जो नैपाली कानून के विशेषज्ञ एवं सत्तारुढ़ पार्टी नैपाल प्रजा परिषद् के नेता हैं। उन्होंने जो कुछ बताया उसी रूप में मैं उसे पाठकों के सामने रख रहा हूँ।

शहीद शमशुल का जन्म नैपाल के शिवराज तौलिहवा जिले के सेमरी नामक ग्राम में, एक निर्धन मुस्लिम परिवार में हुआ था। शमशुल यद्यपि अधिक पढ़े लिखे नहीं थे, फिर भी वे जज-बाती और हौसले के आदमी थे। उनकी सचाई और ईमानदारी ने ही उनको किसान आंदोलन का नेता बनाया।

सम्वत् २०१० में, अभी आजादी को पूरे चार साल भी नहीं बीते थे, कि श्री मातृका प्रसाद तथा श्री विश्वेसर प्रसाद कोइराला,दोनों भाइयों में जोरों की चल पड़ी। किसी ने कहा कि विश्वेसर प्रसाद कोइराला की प्रधान मन्त्री होने की जब आकांक्षा पूरी नहीं हुई तो उन्होंने पार्टी के सभापति की हैसियत से ही प्रधान मन्त्री के अधिकारों को दुरुपयोग करना और करवाना चाहा। किसी किसी ने तो यह भी कहा कि इन दोनों का

झगड़ा "बरूवारी" था। विश्वेसर बाबू ने श्री मातृका प्रसाद से कह दिया था, कि तुम जहाँ तक पैसा खींच सको खींचो, मैं तुम्हारी आलोचना करके अपनी राजनैतिक स्थिति कायम रखूँगा। फिर आम चुनाव के पूर्व ही हम दोनों मिल जायेंगे। जो भी हो, हम आज किसी व्यक्ति विशेष की आलोचना थोड़े ही करने बैठे हैं, हमारा तो विषय यह है कि जब शासन में किसी प्रकार की शिथिलता आ जाती है, तो उसका खमयाजा जनता को भोगना पड़ता है।

सर्वश्री मातृका तथा विश्वेसर के आपसी झगड़े के कारण दो दल हुये। मातृका बाबू की क्रांति से पूर्व कोई राजनैतिक पृष्ठ भूमि नहीं थी। मातृका बाबू ने प्रधान मन्त्री होते ही नैपाल के तमाम प्रतिक्रियावादी तत्वों को जिसमें खासकर जमींदार वर्ग था, अपने हाथ में लिया। सरकार में उनकी धाक राणा शासनकाल से भी अधिक बँध गई। १९५० की क्रांति में हमारे यहाँ के जितने भी निर्दय अत्याचार करने वाले जमींदार थे, नैपाल की जनता ने उनसे अत्याचार का बदला लिया था। जमींदारों में प्रतिशोध की भावना थी ही। उन्होंने मातृका सरकार को अपने पक्ष में करके जमींदार ठाकुर गया प्रसाद शाह के नेतृत्व में असामियों का दमन शुरू किया। तत्कालीन बड़े हाकिम से कहा गया आप भी क्षत्री, मैं भी क्षत्री, आप हमारी सहायता करें, दोनों ने हाथ मिलाये। उस समय सरकार का शासन विभाग पूर्ण रूप से जमींदार नेता के हाथ में था। अनिरुद्धप्रसाद सिंह निमित्त मात्र थे। कोई जमींदार, जमींदार नेता के ट्रैक्टर पर सैनिकों को ले जाकर असामियों को लुटवा सकता था। जमीनदारों ने भी अपनी एक गुण्डों की फौज तैयार कर ली थी। जो दिन-रात असामियों को लूटती थी, जनता के दुःख दर्द को सुनने वाला कोई

न था। १६५० की क्रांति में यह पता चलता था कि एक असामी न बचेगा, नैपाल उजाड़ हो जायगा। कोई भी असामी अपने को निरापद नहीं पा रहा था।

ठीक ऐसे ही समय में सर्वश्री चन्द्रभूषण पाण्डेय, दलबहादुर वकील, भोलानाथ शर्मा, डाक्टर रामेश्वर जी ने जनता से संगठित होकर, मातृका की सरकार तथा जमींदारों के सम्मिलित अत्याचार का मुकाबला करने की अपील की। संवत् २०१० का किसान संगठन अपने ढंग का निराला था। इतिहासकार यदि ईमानदारी से उसे दुनिया के सामने रखें, तो हर आदमी यह कहने को बाध्य होगा; कि इतना सुन्दर संगठन किसी भी देश के क्रांति के इतिहास में नहीं हुआ।

जमीनदारों का घर से निकलना दूभर हो गया, पुलिस ने जिला हेड क्वाटर छोड़ने से इंकार किया। यद्यपि घोषित नहीं हुआ फिर भी केवल सैनिक शासन था। नारों की आवाज पर मिनटों में अपार जन समूह उमड़ पड़ता था। श्री चन्द्रभूषण पाण्डेय तथा श्री भोलानाथ शर्मा ने यदि जनता को अनुशासन में रखने का प्रयत्न न किया होता, तो १६५० के बाद यह दूसरी खून खराबी होती। काश तत्कालीन अनुभवहीन बड़े हाकिम अनिरुद्धप्रसाद ने जनता तथा जन नायकों को समझा होता।

सैनिकों का दस्ता किसी कार्यवश उनवलिया ग्राम में था। तीन सौ रुपये सैनिक दस्ते को देकर कुशवाहा गाँव के जमींदार के आदमियों ने उस सैनिक दस्ते को अपने यहाँ बुलाया, जिसने पहुँचते ही असामियों को पीटना आरम्भ कर दिया। गोहार हुई। जनता में यह खबर बिजली की तरह दौड़ गई, कि लगभग बीस हजार आदमियों ने सैनिक दस्ते को घेर लिया; सैनिकों ने भी बन्दूकें तान लीं, न जनता हटे न सैनिक। जनता होश हवाश में थी, सैनिक शराब के नशे में। यह शमशुल की बहादुरी थी कि पलक

मारते उन्होंने सारे सैनिकों को बाँध लिया। उनकी बन्दूकें छीन लीं। शमशुल ने जनता को सम्बोधित कर कहा कि सैनिकों पर कोई हाथ नहीं उठायेगा। हम सभी इनको इसी हालत में बड़े हाकिम के पास लेकर चलेंगे, वही हमारे नेता भी होंगे। हम सभी मिलकर फरियाद करेंगे, तथा इनके ऊपर कार्यवाही-अनुशासन की माँग करेंगे।

जब सैनिकों को लेकर जनता चली उस समय का दृश्य देखने ही योग्य था। जिले के हेड क्वार्टर पर जब भीड़ पहुँची तो उस समय की संख्या जो लोगों ने बतायी, उस हिसाब से लाखों की थी। जिस समय लाखों की तादाद में जनता का नेतृत्व करते हुए श्री शमशुल तौलिहवा पहुँचे, वहाँ का बड़ा हाकिम अनिरुद्धप्रसाद सिंह प्रसिद्ध स्थान तिलौराकोट देवी के दर्शन को गया था। अदूरदर्शी एवं अनुभवहीन अधिकारियों ने बिना सोचे समझे तथा जनता की बात सुने ही खबर भिजवा दी कि जनता के अभूत पूर्व जमघट से कस्बे तथा सरकारी खजाने के लूटे जाने की आशंका है। बड़ा हाकिम तिलौराकोट से भगा, कस्बे में पहुँचा तो जनता की भीड़ को देखकर उसके कायर मन ने उसकी सुध-बुध खो दी। रास्ते में जनता ने मोटर रोकी, वह इतना व्यग्र था कि उसने खुद जनता के ऊपर रिवाल्वर तान दी। जब जनता ने कहा कि हम आपको नुकसान पहुँचाने नहीं आये हैं, फरियाद करने आये हैं। तब उसकी जान में जान आई, बोला—बंगले पहुँचकर ही सुनूँगा। फिर किसी ने भी उसकी गाड़ी को नहीं रोका, गाड़ी आकर सीधे अन्दर चली गई। कायरों में बहादुरी बाद को जागती है, पहुँचते ही उसने आदेश दिया, सैनिकों ने जनता के खिलाफ पोजीशन ले लिया। हुक्म दिया कि जनता में इस बात को पहुँचाओ कि हम इस तरह कोई भी बात

नहीं सुन सकते। सैनिकों को छोड़कर फौरन भीड़ हट जानी चाहिये।

बड़ा हाकिम ऊपर बङ्गले की छत से बोल रहा था,नीचे शहीद शमशुल उसके बन्द गेट के सींकचों को पकड़े खड़े-खड़े बातें कर रहे थे। ताव में आकर शमशुल ने कहा—तुम्हारी कायरता ने तुम्हारे बुद्धि-विवेक को इस तरह से खत्म कर दिया है, कि तुम इतना भी नहीं सोच सकते कि यदि जनता को किसी से शिकायत है तो वह तुम से, अभी-अभी तुमको तुम्हारे रिवालवर के डर से जनता ने नहीं छोड़ा, बल्कि वह किसी प्रकार का अनुचित कदम नहीं उठाना चाहती है। भीड़ को यदि हटाना चाहते हो तो तुमको उसकी फरियाद सुननी ही होगी।

बड़े हाकिम ऐसे समुदाय के थे जिसको राणा शासन ने सदैव जनताके विरुद्ध इस्तेमाल किया था। उनको इस किसान बालक शमशुल की बात असह्य हो गई। उन्होंने डाटकर हट जाने को कहा।

शमशुल ने कहा—भीड़ हट जाये तो हट जाय, मेरी लाश ही यहाँ से हट सकती है। जब तक मेरी बातें सुनी नहीं जातीं मैं कदापि नहीं हटूँगा।

सामन्तवादी बड़े हाकिम को यह बातें सीने में तीर की तरह लगीं। हमारी बातें.....सुननी होंगी,के नारों से आकाश गूँज उठा।

खीझ कर बड़े हाकिम ने फायर करने का आदेश दे दिया। पहली गोली शहीद शमशुल के सीने को पार कर गई। वे लुढ़क कर जमीन पर आ गिरे जनता में भीषण खलबली मची और वह गेट की तरफ बढ़ी। तभी धाँय धाँय एक बारगी बन्दूकें छूटने लगीं। सैकड़ों फायर हुए जनता आड़ में हो गई, किन्तु टस से मस न हुई। मरने की संख्या एक, घायलों की दस पन्द्रह की

बताई गई। नैपाल के इतिहास में बड़े हाकिम अनिरुद्ध-प्रसाद सिंह, भारत के डायर से कम नहीं माने जायेंगे, जिन्होंने अपनी थोड़ी सी अकड़ को कायम रखने के लिये तौलिहवा में जालियांवाला बाग का दर्दनाक दृश्य पैदा कर दिया।

श्री दलबहादुर जी वकील तथा श्री भोलानाथ शर्मा ने एक सभा की जिसमें बड़े हाकिम को निकालने, जाँच आयोग भेजने की माँग की,तथा उसके इस जघन्य कार्यकी भर्त्सनाकी। बड़े हाकिम से जनता ने लाश को माँगा;उन्होंने सुबह पर टाल दिया,जनता यह समझती थी कि बड़ा हाकिम लाश को गुम करना चाहता है। अत: वह रात भर मैदान में पड़ी चौकसी करती रही। न मालूम किस मटक में लाश बाण गङ्गा नदी पर भेज दी गई। कुछ जनता को साथ में ले,भाई भोलानाथ शर्मा ने पीछा किया, फलस्वरूप लाश को पुन: लाकर जेलखाने के पास रखा गया।

भारत से आये हुये त्रिमोहन थियेट्रिकल कम्पनी की बैल गाड़ियाँ सामानों से लदी खड़ी थीं। भीड़ इतनी थी कि वह निकल नहीं पा रही थीं। इसी बीच गोली चली थी जिसमें उनका एक बैल भी मरा था। एक ऐसे नीच आदमी से जिसका नाम लिख कर मैं अपनी लेखनी को अपवित्र नहीं करना चाहता, उसी से यह वायरलेस दिलाकर कि, यदि गोली चलाने की दूर-दर्शिता बड़े हाकिम ने न की होती तो, कस्बा, खजाना सभी लूटा जाता, एक न बचता; बड़े हाकिम बिलकुल निश्चिन्त थे। सवाल उनके सामने था,किस तरह बैल वाले को समझाया जाय। वह भारतीय है, इस घटना की प्रतिक्रिया भारत में हुये बिना नहीं रह सकती। किसी कदर तीन चार सौ रुपया देकर उससे भी पीछा छुड़ाया। अब बात यदि कुछ शेष रही तो वह यह कि शहीद शमशुल की लाश को किस तरह गुम किया जाय ? नेता लोग

जिसमें खासकर भोलानाथ शर्मा बहुत बुरी तरह पीड़ा कर रहे थे। अन्त में बड़े हाकिम ने श्री शर्मा को सुरक्षा के अन्तर्गत गिरफ्तार कर लिया।

श्री दलबहादुर वकील से आकर जनता के कुछ आदमियों ने बताया कि बड़ा हाकिम कहता है। शमशुल के वारिस को ही उनकी लाश मिल सकती है। उन्होंने तुरन्त घर वालों को बुलाया, वे आये उनसे लाश की भरपाई ली गई। लाखों की तादाद में नर नारी शहीद दर्शन को खड़े थे, किन्तु दर्शन की साध किसी की पूरी न हुई, लाश लापता की जा चुकी थी।

शहीद शमशुल की मूर्ति बनाकर जनता ने उसको दफन किया सभी ने उसको श्रद्धांजलियाँ अर्पित कीं। शहीद शमशुल की यह वीर गाथा युगो-युगो तक अमर रहेगी, जिन्होंने खुद मर कर नैपाल की जनता को जीवन दिया।